ओ३म्

पञ्चमहायज्ञ एवं पर्वप्रदीप

वैदिक नित्यकर्म, पञ्चमहायज्ञ विधि

तथा

आर्यों द्वारा सम्पाद्य

पर्वविधि सहित

सन्- २००७

प्रकाशक एवं भेंटकर्त्ता -प्रो० (कर्नल) स्वतन्त्र कुमार,
कुलपति - गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय,हरिद्वार,
महामन्त्री - पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा, जालन्धर

संस्करण - द्वितीय
मूल्य - नियमित आचरण एवं प्रचार
सन् - २००७

मुद्रक :
एस एस प्रिंटर्स
ए१/४ जीवन ज्योति अपार्टमेंट
पीतम पुरा दिल्ली-११००३४

दो शब्द

ऋषि दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में प्रत्येक मानव के लिए पंच-महायज्ञ का विधान किया है। चिरन्तन भारतीय संस्कृति के शाश्वत स्वरों में ये पंच-महायज्ञ मानव मात्र के जीवन के लिए अभिष्ट है। इन यज्ञ कार्यों को दैनिक जीवन में अपनाकर प्रत्येक मनुष्य सच्चा मानव बनने की दिशा में उन्मुख हो सकता है।

सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि ने लिखा है- जो प्रातः सांय सन्ध्या-अग्निहोत्र न करें, उसको सज्जन लोग सब द्विजो के कर्मों से बाहर निकाल देवें अर्थात् उसे शुद्रवत् समझे "अतएव प्रत्येक आर्य को महर्षि का संदेश है, कि संध्या, अग्नि होत्र आदि पंच महायज्ञ नियम से किये जाये। जैसे श्वास-प्रश्वास सदा लिये जाते है, वैसे ही नित्य संध्या हवन प्रतिदिन करना चाहिए।

गुरुकुल के कुलपति के रुप में कार्य करते हुए मेरी यह हार्दिक कामना रही कि गुरुकुल में प्रवेश करने वाले प्रत्येक छात्र के पास संध्या, हवन, आर्य पर्व-पद्धति आदि की जानकारी देने वाले पुस्तिका हो, जिसे वह जीवन में अपना कर जीवन को सार्थक सिद्ध कर सके। प्रत्येक छात्र यदि नियमित संध्या, अग्नि होत्र, ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना आदि मंत्रों से अपने दैनिक जीवन को प्रारम्भ करता है तो उसका प्रभाव उसके पूरे जीवन पर पड़ता है। परम पिता परमात्मा की अनन्य भक्ति में डूबा छात्र नित नये श्रेष्ठ कार्यों से अपने को परिमार्जित करता है।

इस पुस्तिका को मैने अपने पूज्य माता-पिता की स्मृति में गुरुकुल के छात्रों के हितार्थ प्रकाशित करने का बीड़ा उठाया तथा यह प्रयास किया कि सभी छात्रों को मेरी ओर से यह पुस्तक निःशुल्क रुप से वितरित हो। मेरी कामना है कि प्रत्येक आर्य परिवार से जुड़े घर में यह पुस्तक दैनिक संध्या, हवन हेतु उपलब्ध रहे। पूरे वर्ष में आने वाले आर्य पर्वों की आवश्यक जानकरी इस पुस्तक में देने का प्रयास किया गया है। अपने पूज्य माता-पिता की स्मृति को हृदय में धारण करते हुए आर्य जगत को यह पुस्तक भेंट करते हुए मैं अपने को धन्य समझता हूँ।

पुस्तक के सम्पादन एवं प्रकाशन कार्य में डा.रुप किशोर शास्त्री एवं डा.जगदीश विद्यालंकार ने जो परिश्रम किया उसके लिए वे आशीर्वाद के पात्र हैं।

स्वतन्त्र कुमार

प्रो.स्वतन्त्र कुमार

(कुलपति)

विषय सूची

१.	ब्रह्मयज्ञ (सन्ध्या) -	१
२.	देवयज्ञ (अग्निहोत्र) -	१४
३.	अथेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनामन्त्र	१४
४.	स्वस्तिवाचन-	१८
५.	शान्तिकरण-	३२
६.	ऋत्विग्वरण -	४४
७.	आचमन विधि -	४५
८.	अङ्गस्पर्श क्रिया -	४६
९.	समिधाचयन-	४७
१०.	अग्न्याधान -	४७
११.	अग्निप्रदीपन मन्त्र -	४८
१२.	समिदाधान-	४८
१३.	पञ्चघृताहुतिमन्त्र	५०
१४.	जलप्रसेचन मन्त्र	५१
१५.	आघारावाज्यभागाहुति मन्त्र	५२
१६.	व्याहृत्याहुति मन्त्र	५३
१७.	स्विष्टकृत् होमाहुति मन्त्र	५४
१८.	प्राजापत्याहुति मन्त्र	५५
१९.	आज्याहुति मन्त्र	५६
१९.	अष्टाज्याहुति मन्त्र	५८
२०.	प्रातः कालीन अग्निहोत्र मन्त्र	६२
२१.	सायंकालीन-अग्निहोत्र मन्त्र	६३
२२.	प्रातःसायंकालीन आहुति मन्त्र	६४

२३. पूर्णाहुति मन्त्र ६७
२४. पूर्णमासी की आहुतियाँ - ६८
२५. अमावस्या की आहुतियाँ - ६८
२६. पितृयज्ञ - ६८
२७. अतिथि यज्ञ ६९
२८. बलिवैश्वदेव यज्ञविधि - ७०
२९. पर्वप्रदीप - ७१
३० नव संवत्सरेष्टि - ७१
३१. आर्यसमाज स्थापना दिवस - ७३
३२. श्रीरामनवमी - ७४
३३. श्रावणी उपाकर्म - ७५
३४. श्रीकृष्ण जन्माष्टमी - ७८
३५. विजयादशमी - ७८
३६. दीपावली/श्रीमद्दयानन्द निर्वाण दिवस - ८०
३७. मकर संक्रान्ति पर्व - ८४
३८. वसन्त पंचमी - ८५
३९. सीताष्टमी - ८६
४०. ऋषि दयानन्द बोधोत्सव - ८६
४१. होलिकोत्सव - ८७
४२. यज्ञ प्रार्थना- ९०
४३. भजन- ९०

श्रद्धया समर्पणम्

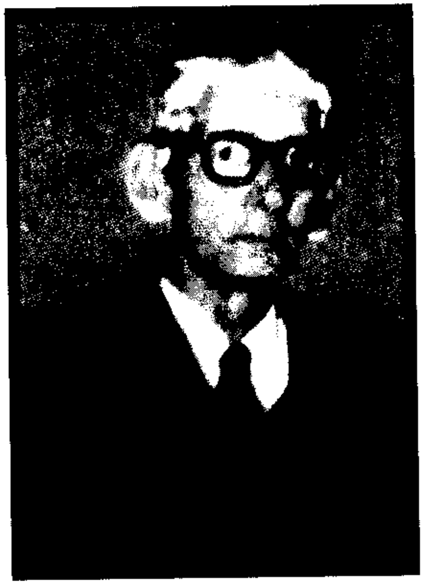

स्व० श्री शान्ति स्वरूप मुरगई

स्व० श्रीमती सरला मुरगई

प्रियं श्रद्धे ददतः प्रियं श्रद्धे दिदासतः।
पियं भोजेषु यज्वस्विदं म उदितं कृधिः।
ऋग्० १०/१५१/२

(हे श्रद्धे! दाता को प्रिय फल मिले, दान देने की इच्छा करने वाले का कल्याण या प्रिय हो, सात्त्विक भोगार्थिओं एवं यज्ञकर्त्ताओं में तुम प्रिय होओ मेरे इस कथन या निवेदन को स्वीकार करो)

-स्वतन्त्र कुमार

सम्पादकीयम्

वैदिक एवं भारतीय संस्कृति त्रैतवाद-ईश्वर- जीव-प्रकृति- पुनर्जन्म, कर्मसिद्धान्त एवं आस्तिक्य भाव पर पूर्णतः आधारित है। अतः इस संस्कृति में पोषित पल्लवित जनमानस ईश्वर की आराधना एवं स्तवन को नित्य कर्म मानकर ईश्वर स्तुति प्रार्थना उपासना ध्यान एवं योगाभ्यास को जीवन में न्यूनाधिक क्रियान्वित करने का प्रयत्न करता रहता है। वेदादि शास्त्रों, दर्शनों एवं उपनिषदों ने जड़ पदार्थ एवं पञ्चतत्त्व निर्मित व्यक्ति की स्तुति व पूजा को घनघोर अविद्या करार दिया है। आधुनिक युग में युगप्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द ने भी सत्-असत् विवेक कराकर ब्रह्माण्डाधिपति निराकार, अजन्मा एक परमेश्वर, जिसका निज नाम ओ३म् है, की स्तुति प्रार्थनोपासना एवं ध्यान करने पर बल दिया है। इसी उदेश्य की पूर्ति हेतु उक्त पुस्तक आपके हाथों में है।

उक्त पुस्तक आर्यों द्वारा नित्य क्रियमाण कर्मों पञ्चमहायज्ञ-सन्ध्या (ब्रह्मयज्ञ), देवयज्ञ (अग्निहोत्र), पितृयज्ञ, वलिवैश्वदेव यज्ञ एवं पितृयज्ञ सन्दर्भ में महर्षि दयानन्द निर्देशित पञ्चमहायज्ञ विधि का नितान्त अनुकरण करती है वहीं प्रायः प्रत्येक मन्त्र के अर्थ की प्रस्तुति की गई है। क्योंकि बिना अर्थ के मन्त्र की सम्पूर्णता का बोध एवं फल नहीं होता। साथ ही प्रायः सभी वेद मन्त्रों पर उदात्त, अनुदात्त और स्वरित चिन्ह इंगित किये गये हैं। वस्तुतः वेद मन्त्रों की इयत्ता स्वरचिन्हों से अभिव्यक्त होती है। पञ्चमहायज्ञों के अतिरिक्त समय-समय पर आर्यो द्वारा मनाये जाने वाले प्रमुख पर्वो एवं त्योहारों तथा उनकीआहुतियों एवं विधियों का भी उल्लेख संक्षेप से किया गया .. जो आर्य पर्व पद्धति पर आधारित हैं।

उक्त पुस्तक के प्रकाशन में गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय के मान्य कुलपति एवं पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री प्रो0 स्वतन्त्र कुमार जी ने रुचि ही नहीं अपितु अपने व्यय पर अपने पूज्य माता-पिता स्व. श्रीमती सरला मुरगई एवं स्व0 श्री शान्तिस्वरूप मुरगई की पावन स्मृति में प्रकाशित करने का बीड़ा उठाया। वस्तुतः संस्कारवान्, आज्ञाकारी एवं आर्य समाज के दीवाने एक योग्य पुत्र की हार्दिक अभिलाषा का परिणाम है कि उन्होंने इसके प्रकाशन के माध्यम से अपने पूज्य माता-पिता को हृदय के श्रद्धासुमनों की अञ्जलि भेंट की है। निश्चय ही मान्य कुलपति जी एवं उनका परिवार पितृ ऋण के प्रति उदात्त भावनाओं के साथ कृतज्ञ है।

डॉ० रूप किशोर शास्त्री
अध्यक्ष-वेद विभाग
गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

ओ३म्

ब्रह्मयज्ञ (सन्ध्या)

अथ गायत्री-मन्त्रः

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।

धियो यो नः प्रचोदयात्॥ -[यजुः० ३६/३]

अर्थः (ओ३म्) हे सर्वरक्षक आप (भूः) प्राणों के प्राण, अर्थात् सबको जीवन देनेवाले (**भुवः**) सब दुःखों से छुड़ानेवाले (**स्वः**) स्वयं सुखस्वरूप और अपने उपासकों को सुखों की प्राप्ति कराने वाले हैं। (**तत्**) आप (**सवितुः**) सकल जगत् के उत्पादक, सूर्यादि प्रकाशकों के भी प्रकाशक, समग्र ऐश्वर्य के दाता (**वरेण्यम्**) वरण अथवा कामना करने योग्य (**भर्गः**) सब देवों के देव, सर्वत्र विजय करानेवाले, सबके आत्माओं के प्रकाशक हैं हम आपका (**धीमहि**) ध्यान करते हैं। (**यः**) जो आप (**नः**) हमारी (**धियः**) बुद्धियों को (**प्रचोदयात्**) उत्तम गुण, कर्म, स्वभाव में प्रेरित कीजिये, अर्थात् आप हमें सद्बुद्धि दीजिये।।

अथाचमन-मन्त्रः

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।

शंयोरभिस्रवन्तु नः॥ -[यजुः० ३६/१२]

अर्थ- (**ओ३म्**) हे सर्वरक्षक (**देवीः**) दिव्य गुणों से युक्त (**आपः**) सर्वव्यापक परमेश्वर! आप (**अभि+इष्टये**) मनोवाञ्छित सुख की प्राप्ति के लिए और (**पीतये**) पूर्णानन्द=मोक्ष-सुख की प्राप्ति के लिए तथा पूर्ण रक्षा के लिए (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) कल्याणकारी (**भवन्तु**) होवें, अर्थात् आप हमारा कल्याण कीजिए और (**नः**) हम पर (**शंयोः**) सुख की (**अभिस्रवन्तु**) वर्षा कीजिए।।

विधि- इस मन्त्र को एक वार बोलकर तीन वार आचमन करें। आचमन करने के लिए दाहिने हाथ की हथेली में इतना जल लेवें, जो कण्ठ के नीचे

हृदय तक पहुँचे। जल इससे कम या अधिक न रहे। हथेली के मूल और मध्य भाग में ओष्ठ लगाकर उस जल का पान करें। आचमन के उपरान्त हाथ धो लेवें। आचमन से कण्ठस्थ कफ और पित्त की निवृत्ति होती है तथा तृषा शान्त होने से मन शान्त रहता है।

अथ अङ्गस्पर्श-मन्त्राः

विधि- जल के पात्र में से बाईं हथेली में जल लेकर दाएँ हाथ की मध्यमा और अनामिका अँगुलियों से जल-स्पर्श करके प्रथम दक्षिण और पश्चात् वाम भाग में इन्द्रिय-स्पर्श करें।

इस प्रकार ईश्वर की प्रार्थनापूर्वक इन्द्रियों का स्पर्श करने का अभिप्राय यह है कि ईश्वर की कृपा से सभी इन्द्रियाँ बलवान् रहें।

ओं वाक् वाक्	-	इस मन्त्र से मुख का दक्षिण और वाम भाग,
ओं प्राणः प्राणः	-	इससे नासिका के दक्षिण और वाम छिद्र,
ओं चक्षुः चक्षुः	-	इससे दक्षिण और वाम नेत्र,
ओं श्रोत्रं श्रोत्रम्	-	इससे दक्षिण और वाम नेत्र,
ओं नाभिः	-	इससे नाभि,
ओं हृदयम्	-	इससे हृदय,
ओं कण्ठः	-	इससे कण्ठ,
ओं शिरः	-	इससे शिर,
ओं बाहुभ्यां यशोबलम्	-	इससे भुजाओं के मूल-स्कन्ध और
ओं करतलकरपृष्ठे	-	इस मन्त्र से दोनों हाथों की हथेलियों एवं उनके पृष्ठ भागों को जल से स्पर्श करें।

अर्थ- (**ओ३म्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आपकी कृपा से (**वाक्-वाक्**) मेरी वाणी और रसना, (**प्राणः-प्राणः**) मेरी प्राण-शक्ति और नासिका, (**चक्षुः-चक्षुः**) मेरे दोनों नेत्र, (**श्रोत्रम्-श्रोत्रम्**) मेरे दोनों कान, (**नाभिः**) मेरी नाभि, (**हृदयम्**) मेरा हृदय, (**कण्ठः**) मेरा कण्ठ, (**शिरः**) मेरा शिर,

(**बाहुभ्याम्**) मेरी दोनों भुजाएँ, (**करतलकरपृष्ठे**) मेरे हाथों की हथेलियाँ और उनके पृष्ठ भाग (**यशोबलम्**) स्वस्थ, यशस्वी और बलवान् रहें।

अथ मार्जन-मन्त्राः

विधि- मार्जन, अर्थात् मध्यमा और अनामिका अंगुलि के अग्रभाग से नेत्रादि अङ्गों पर जल छिड़कें। इससे आलस्य दूर रहता है, जो आलस्य और जल प्राप्त न हो तो न करें -[सत्यार्थप्रकाश, तृतीय समुल्लास]

ओं भूः पुनातु शिरसि	-	इस मंत्र से शिर पर,
ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः	-	इससे दोनों नेत्रों पर,
ओं स्वः पुनातु कण्ठे	-	इससे कण्ठ पर,
ओं महः पुनातु हृदये	-	इससे हृदय पर,
ओं जनः पुनातु नाभ्याम्	-	इससे नाभि पर,
ओं तपः पुनातु पादयोः	-	इससे दोनों पैरों पर,
ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि	-	इससे पुनः शिर पर और
ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र	-	इससे सम्पूर्ण शरीर पर जल के छींटे देवें।

अर्थ- (**ओम् भूः पुनातु शिरसि**) हे प्राणों के प्राण परमेश्वर! मेरे शिर को पवित्र कर दो। (**ओम् भुवः पुनातु नेत्रयोः**) हे दुःख-विनाशक परमेश्वर! मेरे नेत्रों को पवित्र कर दो। (**ओम् स्वः पुनातु कण्ठे**) हे सर्वव्यापी, सुखस्वरूप परमेश्वर! मेरे कण्ठ को पवित्र कर दो। (**ओम् महः पुनातु हृदये**) हे सर्वेश्वर और सभी के पूज्य परमात्मन्! मेरे हृदय को पवित्र कर दो। (**ओम् जनः पुनातु नाभ्याम्**) हे जग के उत्पादक परमेश्वर! मेरी नाभि को पवित्र कर दो। (**ओम् तपः पुनातु पादयोः**) हे ज्ञानस्वरूप, ज्ञानदाता और दुष्टों को दण्ड देनेवाले परमेश्वर! मेरे पैरों को पवित्र कर दो। (**ओम् खम् ब्रह्म पुनातु सर्वत्र**) हे आकाश के समान सर्वव्यापक परमात्मन्! मेरे सभी अङ्गों को पवित्र कर दो।

अथ प्राणायाम-मन्त्रः

ओं भूः, ओं भुवः, ओं स्वः, ओं महः, ओं जनः,

ओं तपः, ओं सत्यम्॥ **-[तै० प्र० १०/अनु २७]**

अर्थ- (**ओम् भूः**) हे परमेश्वर! आप प्राणों के प्राण हैं। (**ओम् भुवः**) हे परमेश्वर! आप सब प्रकार के दुःखों को दूर करनेवाले हैं। (**ओम् स्वः**) हे परमेश्वर! आप सुखस्वरूप तथा सभी सुखों के दाता हैं। (**ओम् महः**) हे परमेश्वर! आप सबसे महान्, सबके पूज्य तथा एकमात्र उपासनीय हैं। (**ओम् जनः**) हे परमेश्वर! आप समस्त संसार को उत्पन्न करने वाले हैं। हे परमेश्वर! आप दुष्टों को दण्ड देनेवाले तथा ज्ञानस्वरूप हैं। (**ओम् सत्यम्**) हे परमेश्वर! आप सत्यस्वरूप और अविनाशी हैं। इन सभी गुणों से युक्त हे परमात्मन्! हम आपकी उपासना करते हैं।

प्राणायाम-विधि- इन मंत्रों से उच्चारणपूर्वक परमात्मा के नामों का ध्यान करें तथा उच्चारण के पश्चात् न्यूनतम तीन वार और अधिकतम इक्कीस वार प्राणायाम करें, अर्थात् अन्दर की वायु को नासिका द्वारा बाहर फैंकें तथा यथाशक्ति बाहर ही रोककर पुनः धीरे-धीरे अन्दर ग्रहण करें। प्राण को कुछ क्षण रोककर पुनः बाहर फैंकें।

इसी प्रकार बारम्बार अभ्यास करने से प्राण उपासक के वश में हो जाता है और प्राण स्थिर होने से मन, मन स्थिर होने से आत्मा भी स्थिर हो जाता है। इन तीनों के स्थिर होने के समय अपने आत्मा के बीच में जो आनन्दस्वरूप, अन्तर्यामी, व्यापक परमेश्वर है, उसके स्वरूप में मग्न हो जाना चाहिए।

अथ अघमर्षण-मन्त्राः

अघमर्षण का अर्थ है-पाप से दूर रहना। "सृष्टिकर्त्ता परमात्मा और सृष्टिक्रम का विचार नीचे लिखित मन्त्रों से करें और जगदीश्वर को सर्वव्यापक, न्यायकारी, सर्वत्र-सर्वदा सब जीवों के कर्मों के द्रष्टा को निश्चित मानके पाप की ओर अपने आत्मा और मन को कभी न जाने देवें, किन्तु सदा धर्मयुक्त कर्मों में वर्तमान रक्खे।"-[संस्कारविधि, गृहस्थाश्रमप्रकरण]

"ऐसा निश्चित जानके ईश्वर से भय करके सब मनुष्यों को उचित है कि मन, कर्म और वचन से पापकर्मों को कभी न करें। इसी का नाम अघमर्षण है, अर्थात् ईश्वर सबके अन्तः करण के कर्मों को देख रहा है। इससे पापकर्मों का आचरण मनुष्य लोग सर्वदा छोड़ देवें।"

-[पञ्चमहायज्ञविधि]

ओ३म् ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।

ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रोऽअर्णवः॥

-[ऋ० १०/१९०/१]

अर्थ- हे परमेश्वर! आपके (**अभि+इद्धात्**) ज्ञानमय (**तपसः**) अनन्त सामर्थ्य से (**ऋतम्**) सत्य-ज्ञान के भण्डार वेद (**च**) और (**सत्यम्**) सत्त्व-रज-तम्-युक्त कार्यरूप प्रकृति। (**च**) और (**अधि+अजायत**) पूर्व कल्प के समान उत्पन्न हुए। (**ततः**) हे ईश्वर! आपके उसी सामर्थ्य से (**रात्रीः**) महाप्रलयरूप रात्रि (**अजायत**) उत्पन्न हुई (**ततः**) उसके पश्चात् उसी ज्ञानमय सामर्थ्य से (**समुद्रः+अर्णवः**) पृथ्वी और अन्तरिक्ष में विद्यमान समुद्र उत्पन्न हुआ, अर्थात् पृथ्वी से लेकर अन्तरिक्ष तक समस्त स्थूल पदार्थों की रचना हुई॥१॥

ओं समुद्रादर्णवादधि संवत्सरोऽअजायत।

अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी॥२॥

-[ऋ० १०/१९०/२]

अर्थ- हे ईश्वर! आपने (**समुद्रात्+अर्णवात्+अधि**) अन्तरिक्ष से पृथ्वीस्थ समुद्र की रचना करने के पश्चात् (**संवत्सरः**) संवत्सर, अर्थात् क्षण, मुहूर्त्त, प्रहर, मास, वर्ष आदि काल की (**अजायत**) रचना की। (**वशी**) जग को वश में रखनेवाले ईश्वर! आपने (**मिषतः**) अपने सहज स्वभाव से (**विश्वस्य**) विश्व के (**अहः+रात्राणि**) दिन और रात्रि के विभागों, अर्थात् घटिका, पल और क्षण, आदि की (**विदधत्**) रचना की॥2॥

ओं सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।

दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः॥३॥

-[ऋ० १०/१९०/३]

अर्थ- हे परमेश्वर! आप (**धाता**) जगत् को उत्पन्न कर-धारण, पोषण और नियमन करनेवाले हैं। आपने अपने अनन्त सामर्थ्य से (**सूर्य-चन्द्रमसौ**) सूर्य और चन्द्रमा, आदि ग्रहों-उपग्रहों को (**दिवम्**) द्युलोक को (**च**) और (**पृथिवीम्**) पृथिवीलोक को (**च**) और (**अन्तरिक्षम्**) अन्तरिक्षलोक को (**अथ**) तथा (**स्वः**) ब्रह्माण्ड के अन्य लोक-लोकान्तरों और ग्रहों-उपग्रहों को तथा उन लोकों में सुख-विशेष के पदार्थों को (**यथापूर्वम्**) पूर्व सृष्टि के अनुसार ही इस सृष्टि में (**अकल्पयत्**) बनाया।

अर्थात् हे सर्वशक्तिमान् परमात्मा! आपने अपने विज्ञान से जिस प्रकार पूर्वकल्प में सृष्टि की रचना की थी, उसी प्रकार इस सृष्टि की भी रचना की है और सभी जीवों के पाप-पुण्य के अनुसार, आपने मनुष्यादि प्राणियों के शरीरों की रचना की है॥३॥

अथ आचमन-मन्त्रः

ओं शन्नो देवीरभिष्टय॒ऽआपो भवन्तु पीतये।

शंयोरभिस्रवन्तु नः॥ -[यजुः0 36/12]

अर्थ- (**देवी**) हे दिव्यगुणों से युक्त (**आपः**) सर्वव्यापक परमेश्वर! आप (**अभि+इष्टये**) मनोवाञ्छित सुख और आनन्द की प्राप्ति तथा पूर्ण रक्षा हेतु (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) कल्याणकारी (**भवन्तु**) होवें, अर्थात् आप हमारा कल्याण कीजिये। आप (**नः**) हम पर (**शंयोः**) सुख की (**अभिस्रवन्तु**) वर्षा कीजिए॥

अथ मनसापरिक्रमा-मन्त्राः

मनसापरिक्रमा का अर्थ है-मन द्वारा सर्वत्र परिक्रमण, अर्थात् विचरण करना और परमेश्वर को सर्वव्यापक जानना। इन सभी मन्त्रों में परमेश्वर के सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान्, रक्षक एवं न्यायकारी, स्वरूप का वर्णन किया गया है। अतः परमात्मा को सर्वव्यापक, न्यायकारी कर्मानुसार फलप्रदाता जानकर-निर्भय, उत्साही और आनन्दित होकर निम्नलिखित मन्त्रों से परमात्मा की स्तुति-प्रार्थना-उपासना करें-

ओ३म् प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥१॥ -[अथर्व० ३/२७/१]

अर्थ- (**अग्निः**) हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर! (**प्राचीदिक्**) हमारे सामने जो पूर्व दिशा है उसके अथवा सूर्योदय की पूर्व दिशा के आप (**अधिपतिः**) स्वामी हैं। आप (**असितः**) बन्धनरहित और (**रक्षिता**) सब प्रकार से हमारी रक्षा करने वाले हैं (**आदित्याः**) सूर्य-किरणें, प्राण, ज्ञान, अथवा आपके नियम (**इषवः**) बाणों के तुल्य, अज्ञानान्धकार के नाशक तथा हमारे जीवन की रक्षा करने के साधन हैं। हे ईश्वर! हम (**तेभ्यः नमः**) आपके इन गुणों को नमस्कार करते हैं, (**अधिपतिभ्यः नमः**) हे जगत् के स्वामी! हम आपको नमस्कार करते हैं। (**रक्षितृभ्यः नमः**) हमारी सब भाँति रक्षा करनेवाले प्रभु! हम आपको नमस्कार करते हैं। (**एभ्यः इषुभ्यः नमः अस्तु**) पापियों को बाण के समान पीड़ा देनेवाले परमेश्वर! हम आपको नमस्कार करते हैं। (**यः**) जो कोई अज्ञान स्वरूप (**अस्मान्**) हमसे (**द्वेष्टि**) द्वेष करता है (**यं**) जिस किसी से अज्ञानवश (**वयम्**) हम (**द्विष्मः**) द्वेष करते हैं (**तम्**) उस द्वेषभाव को (**वः**) आपके (**जम्भे**) मुख, अर्थात् न्याय-व्यवस्था में (**दध्मः**) रखते हैं॥१॥

**ओं दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥२॥**

-[**अथर्व० ३/२७/२**]

अर्थ- (**इन्द्रः**) हे परमैश्वर्ययुक्त जगदीश्वर! (**दक्षिणादिक्**) हमारे दाहिनी ओर जो दक्षिण दिशा है, आप उसके (**अधिपतिः**) स्वामी हैं। (**तिरश्चि**) तिर्यक् योनियों के प्राणियों, अर्थात् कीट, पतङ्ग, वृश्चिक, आदि टेढ़े चलनेवाले अथवा दुष्ट प्राणियों की (**राजीः**) पङ्क्ति से आप हमारी (**रक्षिता**) रक्षा करनेवाले हैं। (**पितरः**) माता-पिता और ज्ञानी लोग (**इषवः**) बाण के तुल्य हमारे जीवन की रक्षा करते हैं॥२॥ (शेष अर्थ पूर्ववत् है।)

**ओं प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः। तेभ्यो
नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं** द्विष्मस्तं **वो जम्भे** दध्मः॥३॥

-[**अथर्व० ३/२७/३**]

अर्थ- (**वरुणः**) हे सर्वोत्तम परमेश्वर! (**प्रतीची दिक्**) हमारे पीछे की ओर जो पश्चिम दिशा है, आप उसके (**अधिपतिः**) स्वामी हैं। (**पृदाकुः**) बड़े-बड़े अजगर सर्प, आदि विषधारी और हिंसक प्राणियों से आप हमारी (**रक्षिता**) रक्षा करनेवाले हैं। (**अन्नम्**) भोज्य-पेय, आदि पदार्थ एवं औषधियाँ (**इषवः**) बाणतुल्य हैं, जो हमारे जीवन की रक्षा करते हैं।।3।। (शेष अर्थ पूर्ववत् है।)

ओं उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताशनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।४।।

-[अथर्व० ३/२७/४]

अर्थ- (**सोमः**) हे जगदुत्पादक, शान्ति और आनन्द देनेवाले परमेश्वर! (**उदीची दिक्**) हमारे बाईं ओर जो उत्तर दिशा है, आप उसके (**अधिपतिः**) स्वामी हैं। हे परमात्मन्! आप (**स्वजः**) अजन्मे और (**रक्षिता**) सबके रक्षक हैं। (**अशनिः**) विद्युत्, आदि दिव्य शक्तियाँ (**इषवः**) बाणतुल्य हैं, जो हमारे जीवन की रक्षा करते हैं।।४।। (शेष अर्थ पूर्ववत् है।)

ओं ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।५।।

-[अथर्व० ३/२७/५]

अर्थ- (**विष्णुः**) हे सर्वव्यापक परमेश्वर! (**ध्रुवा दिक्**) हमारे नीचे की ओर जो दिशा है, आप उसके (**अधिपतिः**) स्वामी हैं। (**कल्माषग्रीवः**) हरे रङ्ग के वृक्षादि ग्रीवा के समान हैं, आप उनके द्वारा हमारी (**रक्षिता**)रक्षा करते हैं अथवा आप हमारे समस्त पापों, दोषों, दुःखों को नष्ट करनेवाले हैं। (**वीरुधः**) वृक्षादि वनस्पतियाँ, (**इषवः**) बाण के तुल्य हैं, अर्थात् जीवनदायक, रोग-नाशक तथा हमारे जीवन की रक्षा करते हैं।।५।। (शेष अर्थ पूर्ववत् है।)

ओं ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥६॥ -[अथर्व० ३/२७/६]

अर्थ- (**बृहस्पतिः**) हे वाणी, वेद-शास्त्र और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के स्वामी परमेश्वर! (**ऊर्ध्वा दिक्**) हमारे ऊपर की ओर जो दिशा है, आप उसके (**अधिपतिः**) स्वामी हैं। (**श्वित्रः**) हे ज्ञानमय परमात्मन्! आप हमारे (**रक्षिताः**) रक्षक हैं। (**वर्षम्**) वर्षा के बिन्दु (**इषवः**) बाण के तुल्य हैं, अर्थात् जल, ज्ञान, आनन्द, आदि के वर्षाबिन्दु दुःख और अज्ञान के नाशक तथा हमारे जीवन की रक्षा करते हैं॥६॥ (शेष अर्थ पूर्ववत् है।)

अथ उपस्थान-मन्त्राः

उपस्थान का अर्थ है-अति निकट होना या बैठना। मनसापरिक्रमा के मन्त्रों से चित्त शुद्ध, शान्त और स्थिर कर उपस्थान मन्त्रों के उच्चारण और अर्थ विचारपूर्वक अनन्त और सर्वव्यापी परमेश्वर का उपस्थान करें, अर्थात् परमेश्वर को अपने अति निकट तथा स्वयं को परमात्मा के अति निकट समझें। अब अपने आत्मा को परमात्मा के आश्रय में स्थित करें। उपस्थान-मन्त्र इस प्रकार हैं।

ओम् उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्तऽउत्तरम्।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥१॥

-[यजुः० ३५/१४]

अर्थ- हे परमेश्वर! आप (**तमसः**) सब अविद्या-अन्धकार से (**परि**) दूर वा पृथक् रहनेवाले, (**स्वः**) आनन्द एवं प्रकाशस्वरूप (**उत्तरम्**) प्रलय के अनन्तर भी सदैव वर्तमान रहनेवाले हैं। (**उत्+वयम्**) श्रद्धापूर्वक हम (**पश्यन्त**) आपको देखते हैं, अर्थात् आपका ध्यान करते हैं। हे ईश्वर! आप (**देवत्रा देवं**) देवों के भी देव, अर्थात् आनन्द और प्रकाश देनेवालों को भी आनन्द और प्रकाश देनेवाले, (**सूर्यम्**) सम्पूर्ण जगत् के उत्पादक, प्रकाशक और सञ्चालन करने वाले, (**ज्योतिः**) ज्ञान स्वप्रकाशस्वरूप (**उत्तमम्**) और सर्वोत्तम हैं। हम आपको ही (**अगन्म**) प्राप्त हुए हैं, अर्थात्

अब हम आपकी ही शरण में हैं, इसलिए अब आप ही हमारे रक्षक हैं।।१।।

ओं उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः।
दृशे विश्वाय सूर्यम् ।।२।। -[**यजुः० ३३/३१**]

अर्थ- हे परमेश्वर आप (**जातवेदसम्**) इस संसार और वेद-ज्ञान के जनक, (**देवम्**) दिव्यगुणयुक्त देवों के भी देव, (**सूर्यम्**) चराचर जगत् के उत्पादक, प्रकाशक और सञ्चालक हैं। (**केतवः**) वेद की श्रुतियाँ तथा संसार के रचनादि के नियम (**त्यम्**) उक्त गुणयुक्त उस=आपको (**उ**) ही (**उत**) अच्छी प्रकार (**वहन्ति**) प्राप्त कराते हैं, अर्थात् आपका ही ज्ञान कराते हैं। (**विश्वाय**) पूर्णरूप से (**दृशे**) आपको देखने वा ज्ञान करने के लिए हम आपकी उपासना करते हैं ।।2।।

ओं चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षꣳ सूर्यऽआत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा।।३।।

-[**यजुः० ७/४२**]

अर्थ- हे परमात्मन्! आप (**चित्रम्**) पूज्य, कामना करने के योग्य तथा अद्भुत बल एवं प्रकाशस्वरूप, (**देवानाम्**) दिव्य स्वभाववाले विद्वानों के (**अनीकम्**) सर्वोत्तम बल तथा (**उत्+अगात्**) अच्छी प्रकार आगे ले जानेवाले हैं। आप (**मित्रस्य**) राग-द्वेषरहित, मित्रभाववाले उपासक के, सूर्यलोक और प्राण के, (**वरुणस्य**) श्रेष्ठ वरणीय उपासक के (**अग्नेः**) उत्कृष्ट ज्ञानवाले (**चक्षुः**) दर्शक, मार्गदर्शक और प्रकाशक हैं। हे ईश्वर! आप (**द्यावा-पृथिवी-अन्तरिक्षम्**) द्युलोक, पृथिवीलोक और अन्तरिक्ष=आकाश, आदि लोक-लोकान्तरों को (**आ+अप्राः**) बनाकर उनमें व्याप्त होकर धारण और रक्षण करनेवाले हैं। आप (**सूर्यः**) सकल जगत् के उत्पादक और प्रकाशक, (**जगतः च तस्थुषः**) चेतन और स्थावर जगत् के (**आत्मा**) आत्मा, अर्थात् उसमें व्याप्त होकर उसका सञ्चालन करनेवाले हैं। (**स्वाहा**) यह वचन सत्य है अथवा मैं इस सत्य को स्वीकार करता हूँ।।३।।

ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतःशृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥४॥ -[यजुः० ३६/२४]

अर्थ- हे परमेश्वर (**तत्**) वह=आप (**चक्षुः**) सबके द्रष्टा और सबको दृष्टि देनेवाले, (**देवहितम्**) दिव्यगुण-कर्म और स्वभाववाले विद्वानों के हितकारी, (**पुरस्तात्**) सृष्टि से पूर्व, मध्य तथा पश्चात् विद्यमान् रहनेवाले, (**शुक्रम्**) शुद्धस्वरूप (**उत् चरत्**) उत्कृष्टता के साथ सबके ज्ञाता और सर्वत्र व्याप्त हैं। आपकी कृपा से हम (**शरदः शतं पश्येम**) सौ वर्षों तक आपको व जगत् को देखें, (**शरदः शतं शृणुयाम**) सौ वर्षों तक शास्त्रों और मङ्गल-वचनों को सुनें, (**शरदः शतं**) सौ वर्षों तक (**अदीनाः**) अदीन=स्वतन्त्र, स्वस्थ, समृद्ध और सम्मानित (**स्याम**) रहें (**च**) और आपकी कृपा से ही (**शरदः शतात् भूयः**) सौ वर्षों के उपरान्त भी हम लोग देखें, जीवें, सुनें, वेद-उपदेश करें और स्वाधीन रहें, अर्थात् सौ वर्षों के बाद भी हम स्वस्थ, सुखी और स्वतन्त्र रहें, हमारा मन पवित्र रहे और हम आपकी उपासना से सदैव आनन्दित रहें॥४॥

"यही एक परमेश्वर सब मनुष्यों का उपास्य देव है। जो मनुष्य इसको छोड़के दूसरों की उपासना करता है, वह पशु के समान होके सब दिन दुःख भोगता रहता है। इसलिए प्रेम में अत्यन्त मग्न होके आत्मा और मन को परमेश्वर में जोड़के इन मन्त्रों से स्तुति और प्रार्थना सदा करते रहें।"

-[महर्षि दयानन्द, पञ्चमहायज्ञविधि]

अथ गुरुमन्त्रः

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥ -[यजुः० ३६/३]

अर्थ- (**ओ३म्**) हे परमेश्वर! आप (**भूः**) प्राणों के प्राण (**भुवः**) सब दुःखों से छुड़ानेवाले (**स्वः**) स्वयं सुखस्वरूप और अपने उपासकों को सुखों

की प्राप्ति करानेवाले हैं। (**तत्**) वह=आप (**सवितुः**) सकल जगत् के उत्पादक, सूर्यादि प्रकाशकों के भी प्रकाशक, समग्र ऐश्वर्य के दाता (**वरेण्यम्**) वरण अथवा कामना करने-योग्य (**भर्गः**) सब क्लेशों को भस्म करनेवाले, पूर्ण शुद्ध एवं प्रकाशस्वरूप, (**देवस्य**) सब देवों के देव, सर्वत्र विजय करानेवाले, सबके आत्माओं के प्रकाशक हैं। हम आपका (**धीमहि**) ध्यान करते हैं। (**यः**) जो=आप (**नः**) हमारी (**धियः**) बुद्धियों को (**प्रचोदयात्**) उत्तम गुण-कर्म-स्वभाव में प्रेरित कीजिये।।

अथ समर्पणम्

पूर्वोक्त प्रकार से सभी मन्त्रों से अर्थ विचारपूर्वक परमपिता परमेश्वर की उपासनाकर निम्नलिखित वाक्य का उच्चारण करते हुए स्वयं को परमेश्वर को समर्पित करें-

हे ईश्वर दयानिधे! भवत्कृपयानेन जपोपासनादिकर्मणा
धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।।

अर्थ- हे ईश्वर दयानिधे! (**भवत् कृपया**) आपकी कृपा से (**अनेन**) हम द्वारा किये गए इस (**जप+उपासना+आदि+कर्मणा**) जप, उपासना, आदि कर्म से (**धर्म**) सत्य-न्याय और परोपकार का आचरण करना (**अर्थ**) धर्मयुक्त कर्मों से सांसारिक सुख-प्राप्ति के पदार्थों को प्राप्त करना, (**काम**) धर्म और अर्थ से इष्ट भोगों का सेवन करना, (**मोक्ष**) समस्त दुःखों, दुर्गुणों, दुष्कर्मों और दुर्जनों से मुक्त होकर सर्वदा आनन्द में रहना है इन चारों की (**सिद्धिः**) सिद्धि (**नः सद्य भवेत्**) हमें शीघ्र प्राप्त होवे।।

ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय **च॥** -[यजुः० १६/४१]

अर्थ- हे (**शम्भवाय**) मोक्ष-सुखस्वरूप तथा मोक्ष-सुख देने वाले (**च**) और (**मयोभवाय**) उत्तम सुखस्वरूप तथा संसार के उत्तम सुखों को देनेवाले परमेश्वर! (**नमः**) हम आपको नमस्कार करते हैं (**च**) और (**शङ्कराय**) कल्याण ही करनेवाले (**च**) और (**मयस्कराय**) अपने भक्तों को सुख देने वाले परमात्मन्! (**नमः**) हम आपको नमस्कार करते हैं (**च**) और (**शिवाय**) समस्त दुःखों को दूर कल्याण करनेवाले (**च**) और (**शिवतराय**) सब भाँति अत्यन्त कल्याण करनेवाले परमेश्वर! (**नमः च**) हम आपको बारम्बार, नमस्कार करते हैं।

इति ब्रह्मयज्ञ (सन्ध्योपासना) विधिः॥

अथेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनाः

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ।
यद् भद्रन्तन्न आ सुव ॥१॥

यजु० अ० ३० । मं० ३ ॥

अर्थ—हे (सवितः) सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त (देव) शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपा करके (नः) हमारे (विश्वानि) सम्पूर्ण (दुरितानि) दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को (परा, सुव) दूर कर दीजिये (यत्) जो (भद्रम्) कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं, (तत्) वह सब हमको (आ, सुव) प्राप्त कीजिये [=कराइये] ॥१॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२॥

यजु० अ० १३ । मं० ४ ॥

अर्थ—जो (हिरण्यगर्भः) स्वप्रकाशस्वरूप और जिसने प्रकाश करनेहारे सूर्य चन्द्रादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं, जो (भूतस्य) उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का (जातः) प्रसिद्ध (पतिः) स्वामी (एकः) एक ही चेतनस्वरूप (आसीत्) था, जो (अग्रे) सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व (समवर्त्तत) वर्तमान था, (सः) सो [=वह] (इमाम्) इस (पृथिवीम्) भूमि (उत) और (द्याम्) सूर्यादि का (दाधार) धारण कर रहा है, हम लोग उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) शुद्ध परमात्मा के लिये (हविषा) ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अतिप्रेम से (विधेम) विशेष भक्ति किया करें ॥२॥

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य च्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३॥

य० अ० २५। मं० १३ ॥

अर्थ (यः) जो (आत्मदाः) आत्मज्ञान का दाता (बलदाः) शरीर, आत्मा और समाज के बल का देनेहारा (यस्य) जिसकी (विश्वे) सब (देवाः) विद्वान् लोग (उपासते) उपासना करते हैं, और (यस्य) जिसका (प्रशिषम्) प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं (यस्य) जिसका (छाया) आश्रय ही (अमृतम्) मोक्ष सुखदायक है, (यस्य) जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही (मृत्युः) मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) सकल ज्ञान के देनेहारे परमात्मा की प्राप्ति के लिये (हविषा) आत्मा और अन्तःकरण से (विधेम) भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें ॥३॥

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशेऽअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥४॥

य० अ० २३। मं० ३ ॥

अर्थ (यः) जो (प्राणतः) प्राणवाले और (निमिषतः) अप्राणिरूप (जगतः) जगत् का (महित्वा) अपने अनन्त महिमा से (एक इत्) एक ही (राजा) राजा (बभूव) विराजमान है (यः) जो (अस्य) इस (द्विपदः) मनुष्यादि और (चतुष्पदः) गौ आदि प्राणियों के शरीर की (ईशे) रचना करता है, हम लोग उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) सकलैश्वर्य के देनेहारे परमात्मा की उपासना अर्थात् (हविषा) अपनी सकल उत्तम सामग्री को उसकी आज्ञा पालन में समर्पित करके (विधेम) विशेष भक्ति करें ॥४॥

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः ।
योऽअन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥५॥

य० अ० ३२ । मं० ६ ॥

अर्थ – (येन) जिस परमात्मा ने (उग्रा) तीक्ष्ण स्वभाव वाले (द्यौः) सूर्य आदि (च) और (पृथिवी) भूमि को (दृढा) धारण (येन) जिस जगदीश्वर ने (स्वः) सुख को (स्तभितम्) धारण और (येन) जिस ईश्वर ने (नाकः) दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है (यः) जो (अन्तरिक्षे) आकाश में (रजसः) सब लोक-लोकान्तरों को (विमानः) विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों को निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस (कस्मै) सुखदायक (देवाय) कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिये (हविषा) सब सामर्थ्य से (विधेम) विशेष भक्ति करें ॥५॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥६॥

ऋ० मं० १० । सू० १२१ मं० १० ॥

अर्थ – हे (प्रजापते) सब प्रजा के स्वामी परमात्मा (त्वत्) आप से (अन्यः) भिन्न दूसरा कोई (ता) उन (एतानि) इन (विश्वा) सब (जातानि) उत्पन्न हुए जड़ चेतनादिकों को (न) नहीं (परि, बभूव) तिरस्कार करता है, अर्थात् आप सर्वोपरि हैं (यत्कामाः) जिस-जिस पदार्थ की कामना वाले हम लोग (ते) आपका (जुहुमः) आश्रय लेवें और वाञ्छा करें (तत्) वह कामना (नः) हमारी सिद्ध (अस्तु) होवे, जिससे (वयम्) हम लोग (रयीणाम्) धनैश्वर्यों के (पतयः) स्वामी (स्याम) होवें ॥६॥

स नो॒ बन्धु॑र्जनि॒ता स वि॑धा॒ता धामा॑नि वेद॒ भुव॑नानि॒ विश्वा॑ ।
यत्र॑ दे॒वा अ॒मृत॑मानशा॒नास्तृ॒तीये॒ धाम॑न्न॒ध्यैर॑यन्त ॥७॥

य० अ० ३२ । मं० १० ॥

अर्थ – हे मनुष्यो (सः) वह परमात्मा (नः) अपने लोगों को (बन्धुः) भ्राता के समान सुखदायक (जनिता) सकल जगत् का उत्पादक (सः) वह (विधाता) सब कामों का पूर्ण करने हारा, (विश्वा) सम्पूर्ण (भुवनानि) लोकमात्र और (धामानि) नाम, स्थान, जन्मों को (वेद) जानता है, और (यत्र) जिस (तृतीये) सांसारिक सुख दुःख से रहित नित्यानन्दयुक्त (धामन्) मोक्षस्वरूप धारण करने हारे परमात्मा में (अमृतम्) मोक्ष को (आनशानाः) प्राप्त होके (देवाः) विद्वान् लोग (अध्यैरयन्त) स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है, अपने लोग मिल के सदा उसकी भक्ति किया करें ॥७॥

अग्ने॒ नय॑ सु॒पथा॑ रा॒येऽअ॒स्मान् विश्वा॑नि देव व॒युना॑नि वि॒द्वान् ।
यु॒यो॒ध्य॒स्मज्जु॑हुरा॒णमेनो॒ भूयि॑ष्ठान्ते॒ नम॑ उक्तिं विधेम ॥८॥

य० अ० ४० । मं० १६ ॥

अर्थ – हे (अग्ने) स्वप्रकाश, ज्ञानस्वरूप, सब जगत् के प्रकाश करने हारे (देव) सकल सुखदाता परमेश्वर ! आप जिससे (विद्वान्) सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं, कृपा करके (अस्मान्) हम लोगों को (राये) विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये (सुपथा) अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से (विश्वानि) सम्पूर्ण (वयुनानि) प्रज्ञान और उत्तम कर्म (नय) प्राप्त कराइये, और (अस्मत्) हम से (जुहुराणम्) कुटिलतायुक्त (एनः) पापरूप कर्म को (युयोधि) दूर कीजिये, इस कारण हम लोग (ते) आपकी (भूयिष्ठाम्) बहुत प्रकार की स्तुतिरूप (नमउक्तिम्) नम्रतापूर्वक प्रशंसा (विधेम) सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें ॥८॥

इतीश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनाप्रकरणम् ॥

अथ स्वस्तिवाचनम्

'स्वस्तिवाचन' शब्द का अर्थ - 'स्वस्ति' शब्द-'सु'+'अस्ति' दो पदों के योग से बना, है, जिसका अर्थ है-कल्याण या मङ्गल, **अर्थात्** ऐसा कर्म, जिसमें सबकुछ सुखमय, मङ्गलमय या कल्याणमय ही हो। **'वाचन'** शब्द का अर्थ है-पाठ या उच्चारण। इस प्रकार **'स्वस्ति-वाचन'** का अर्थ हुआ-परमेश्वर से सुख, कल्याण या मङ्गल की प्रार्थना करने के लिए वेद-मंत्रों का उच्चारण करना।

मन्त्रों का उच्चारण अर्थ-चिन्तन-सहित करना चाहिए। इसलिए सभी मन्त्रों के अर्थ को ध्यानपूर्वक पढ़कर स्मरण कर लेना चाहिए। अर्थ-ज्ञान होने पर ही मन्त्रोच्चारण में परमानन्द आता है। स्वस्तिवाचन के सभी मन्त्र अर्थ-सहित इस प्रकार हैं-

ओ३म् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम् ॥१॥ -[ऋ० १/१/१]

अर्थ- हे परमेश्वर! आप (**अग्निम्**) प्रकाशस्वरूप, सर्वदोषविनाशक, (**पुरोहितम्**) सृष्टि-उत्पत्ति के पूर्व से सृष्टि के मूलकारण परमाणु, आदि को धारण करनेवाले, (**यज्ञस्य**) सृष्टि-रूपी यज्ञ के (**देवम्**) प्रकाश करनेवाले (**ऋत्विजम्**) वारम्वार उत्पत्ति के समय स्थूल सृष्टि को रचनेवाले तथा ऋतु-ऋतु में उपासना करने-योग्य, (**होतारम्**) सृष्टि-यज्ञ के होता, सृष्टि के निमित्तकारण, प्रलय के समय सृष्टि को अपने आश्रय में समा लेने वाले और (**रत्नधातमम्**) मनोहर पृथिवी व स्वर्ण, आदि रत्नों को धारण करनेवाले हैं। हम आपकी (**ईळे**) स्तुति-वन्दना करते हैं।।१।।

ओं स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव।
सचस्वा नः स्वस्तये॥२॥ -[ऋ० १/१/९]

अर्थ- (**अग्ने**) हे ज्ञानवस्वरूप परमेश्वर! (**पिता+इव**) पिता के समान=जैसे पिता (**सूनवे**) अपने पुत्र के लिए उत्तम-हितकारी ज्ञान देता है,

वैसे ही (**सः**) उक्तगुणयुक्त आप (**नः**) हम लोगों के लिए (**सूपायनः**) उत्तम-हितकारी ज्ञान, पदार्थ एवं सब सुखों को देनेवाले (**भव**) होइये। आप (**नः**) हम लोगों को (**स्वस्तये**) सब सुखों=कल्याण के लिए (**सचस्व**) अपने साथ संयुक्त कीजिये।।२।।

ओं स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना।।३।।

-[ऋ० ५/५१/११]

अर्थ- हे परमेश्वर! आपकी कृपा से (**अश्विना**) अध्यापक और उपदेशक, सूर्य-चन्द्र (**नः**) हमारे लिए (**स्वस्ति**) कल्याण=सुख को (**मिमीताम्**) प्रदान करें, (**भगः**) समस्त धन-ऐश्वर्य (**स्वस्ति**) कल्याणकारी होवें; (**देवी**) दिव्यगुणों से भरपूर (**अदितिः**) वेद-विद्या (**अनर्वणः**) ध र्म के मार्ग पर चलनेवाले सदाचारी मनुष्यों का (**स्वस्ति**) कल्याण करे। (**पूषा**) पुष्टिकारक अन्न-दुग्धादि पदार्थ और (**असुरः**) मेघ (**नः**) हमारा (**स्वास्ति**) कल्याण (**दधातु**) करें; (**द्यावापृथिवी**) सूर्य और पृथिवी वा सूर्यलोक और पृथिवीलोक (**सुचेतुना**) उत्तम चेतना, प्रकाश, ज्ञान से (स्वस्ति) हमारा कल्याण करें।।३।।

ओं स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः।।४।।

-[ऋ० ५/५१/१२]

अर्थ-हे परमेश्वर! हम लोग (**स्वस्तये**) सुख-शान्ति व आनन्द के लिए-(**वायुम्**) सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापी, (**सोमम्**) शान्ति व ऐश्वर्य के भण्डार, आपको (**उप, ब्रवामहै**) अपने समीप बुलाते हैं, अर्थात् आपकी उपासना करते हैं। (**यः**) उक्त गुणयुक्त आप (**भुवनस्य**) इस संसार के (**पतिः**) स्वामी हैं, आप हमारा (**स्वस्ति**) कल्याण कीजिये, हमें सब सुख-शान्ति प्रदान कीजिये। (**सर्वगणं**) हे सब प्राणियों तथा (**बृहस्पतिम्**) वेद-वाणी, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के स्वामी परमात्मा! हम लोग आपको (**स्वस्तये**) सभी दुःख दूर करने के लिए पुकारते हैं; (**आदित्यासः**) आपके दिव्यगुण वा शक्तियाँ (**नः**) हमारे (**स्वस्तये**) अत्यन्त सुख के लिए (**भवन्तु**)

होवें, अर्थात् आप हमें अत्यन्त सुख प्रदान कीजिये।।4।।

ओं विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये।
देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ।।५।।

-[ऋ० ५/५१/१३]

अर्थ- हे परमेश्वर! (**विश्वे देवाः**) आपकी सभी दिव्य शक्तियाँ (**नः**) हमारे लिए (**अद्य**) आज=अतिशीघ्र (**स्वस्तये**) कल्याणकारी होवें; (**वैश्वानरः**) सम्पूर्ण चराचर जगत् में प्रकाशमान् (**वसुः**) सर्वत्र वसनेवाले=सर्वव्यापी, (**अग्निः**) ज्ञान-प्रकाशस्वरूप परमात्मा! आप (**स्वस्तये**) हमारा कल्याण कीजिये। हे (**देवाः**) सभी दिव्य-गुण और शक्तियों से युक्त (**ऋभवः**) सर्वज्ञ प्रभो! आप (**स्वस्तये**) हमारे कल्याण के लिए (**अवन्तु**) हमारी रक्षा कीजिये और हे (**रुद्रः**) दुष्टों को दण्ड देनेवाले परमात्मा! आप (**नः**) हमें (**अंहसः**) पाप-कर्म से (**पातु**) बचाइये तथा हमारा (**स्वस्ति**) कल्याण कीजिये।।२।।

ओं स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि।।६।।

-[ऋ० ५/५१/१४]

अर्थ- हे परमेश्वर! (**मित्रावरुणा**) प्राण और अपान, आदि वायु (**स्वस्ति**) हमें, सुखकारी होवें; (**पथ्ये**) मार्ग व कर्म में (**रेवति**) जल, नदियाँ या धन (**स्वस्ति**) सुखकारी होवें। (**इन्द्रः च अग्निः**) वायु और विद्युत् (**नः**) हमारे लिए (**स्वस्ति**) सुखकारी होवें; तथा (**अदिते**) हे अखण्ड परमेश्वर! आप (**नः**) हम लोगों के लिए (**स्वस्ति**) सुख (**कृधि**) कीजिये।।६।।

ओं स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि।।७।। -[ऋ० ५/५१/१५]

अर्थ- हे परमेश्वर! आपकी कृपा से हम लोग (**सूर्य-चन्द्रमसौ-इव**) सूर्य-चन्द्रमा के समान (**स्वस्ति**) कल्याणकारी (**पन्थाम्**) मार्गों के

(**अनु चरेम**) अनुगामी हों और हम (**ददता**) दानशील, (**अघ्नता**) अहिंसक=नाश न करनेवाले (**जानता**) ज्ञानी-विद्वानों के साथ (**पुनः**) वार-वार (**सं गमेमहि**) सत्सङ्गति करें॥७॥

ओं ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥८॥

-[ऋ० ७/३५/१५]

अर्थ- हे परमेश्वर! (**ये**) जो= आप (**देवानाम्**) देवों के भी देव, (**यज्ञियानाम्**) पूज्यों में भी (**यज्ञियाः**) पूज्य, (**मनोः**) मननशील लोगों द्वारा (**यजत्राः**) यजनीय=उपासना करने के योग्य, (**अमृताः**) अमर और (**ऋतज्ञाः**) सत्य को जाननेवाले हैं। (**ते**) आप (**अद्य**) आज (**नः**) हम लोगों के लिए (**उरुगायम्**) दिव्य विद्वानों द्वारा गाये जानेवाले या अति प्रशंसनीय, विद्याबोध को (**रासन्ताम्**) प्रदान कीजिये। हे सर्वशक्तिमान् प्रभो! (**यूयम्**) आप (**स्वस्तिभिः**) कल्याणकारी उपायों द्वारा (**नः**) हम लोगों की (**सदा**) सदा (**पात**) रक्षा कीजिये॥८॥

ओं येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः।
उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वनसस्ताँ **आदित्याँ** अनुमदा **स्वस्तये॥९॥**

-[ऋ० १०/६३/३]

अर्थ- हे परमेश्वर! (**येभ्यः**) जिन दिव्यगुण-सम्पन्न, सदाचारी विद्वानों के लिए-(**माता**) सबका निर्माण और पालन-पोषण करनेवाली पृथिवी माता (**मधमत्** मधुर (**पयः**) रस-दुग्ध, अन्नादि पदार्थों को (**पिन्वते**) प्रदान करती है; (**द्यौ**) द्युलोक और (**अद्रिबर्हाः**) मेघों से भरपूर (**अदितिः**) अखण्ड आकाश या अन्तरिक्ष (**पीयूषम्**) अमृतमय जल की वर्षा करता है। (**उक्थशुष्मान्**) प्रशंसनीय विद्या-बलवाले (**वृषभरान्**) ज्ञान की वर्षा करनेवाले, वृष्टियज्ञ करानेवाले, (**स्वप्नसः**) उत्तम-कर्म करनेवाले (**तान्**) उन विद्वानों को (**स्वस्तये**) हमारे कल्याण के लिए (**अनु मद**) प्राप्त कराइये॥९॥

ओं नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये॥१०॥

-[ऋ० १०/६३/४]

अर्थ- हे परमेश्वर! जो (**नृचक्षसः**) मनुष्यों के द्रष्टा=मनुष्यों के अच्छे-बुरे व्यवहार की परीक्षा करनेवाले (**अनिमिषन्तः**) आलस्यरहित, सदा सावधान (**बृहत्**) महान् (**देवासः**) विद्वान् जन, (**अमृतत्वम्**) अमरता=मोक्ष को प्राप्त करते हैं या इस जीवन में ही मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं; जो (**ज्योतिरथाः**) ज्ञान-प्रकाश-रूपी रथ पर आरुढ़ रहनेवाले=ज्ञानीजन, (**अहिमायाः**) अहिंसित-अत्यधिक बुद्धिवाले, (**अनागसः**) पापरहित, (**दिवः**) दिव्य-ज्ञान के (**वर्ष्माणम्**) सर्वोच्च स्थान को (**वसते**) प्राप्त करते हैं, वे विद्वान् हमारे (**स्वस्तये**) कल्याण के लिए होवें, अर्थात् हमारा कल्याण करें॥१०॥

ओं सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम्।
ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये॥११॥

-[ऋ० १०/६३/५]

अर्थ- हे परमेश्वर! आपकी कृपा से (**ये**) जो (**सम्राजः**) अपनी सद्-विद्या, सद्-ज्ञान, सद्गुणों और शुभकर्मों से प्रकाशमान्, यशस्वी हैं; (**सुवृधः**) उत्तम शुभ-ज्ञान-कर्मों से अपनी तथा दूसरों की उन्नति करनेवाले हैं; (**यज्ञम्**) यज्ञ को (**आययुः**) प्राप्त होते हैं, यज्ञों का अनुष्ठान करते हैं; (**अपरिह्वृताः**) कुटिलता-रहित हैं; (**दिवि क्षयं**) दिव्य=उच्च सम्मान के पद पर (आक्षये) विराजमान हैं, अर्थात् मोक्ष-पद को प्राप्त करने के योग्य हैं, हम लोग ([illegible]ान्) उन (**महः**) महान् (**आदित्यान्**) तेजस्वी पुरुषों और (**अदितिम्**) अखण्ड वेद-विद्या या तेजस्विनी स्त्रियों की (**नमसा**) नमस्कार, अन्न-पान, आदि द्वारा तथा (**सुवृक्तिभिः**) उत्तम प्रशंसनीय वचनों द्वारा (**आविवास**) सेवा करें, जिससे वे हमें कल्याण का मार्ग दिखावें और हम भी उन जैसे गुण-कर्म-स्वभाववाले होकर सुख को प्राप्त करें॥११॥

ओं को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन।
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये॥१२॥

-[ऋ० १०/६३/६]

अर्थ- (**क**) हे परमेश्वर! (**वः**) आप विद्वानों के लिए (**स्तोमम्**) स्तुति-समूहों=वेद-मन्त्रों को (**राधति**) रचते हो, (**यम्**) जिस=आपकी (**जुजोषथ**) हम स्तुति करते हैं। आप (**तुविजाता**) बार-बार जन्म देनेवाले (**मनुष्यः**) मनुष्यों को (**यति स्थन्**) सन्मार्ग में स्थित करते हो, (**कः**) हे ईश्वर! (**वः**) आप (**अध्वरम्**) हिंसारहित सृष्टि-यज्ञ को (**अरम्**) अलङ्कृत (**करत्**) करते हो। (**यः**) जो=आप (**नः**) हमारे (**स्वस्तये**) कल्याण के लिए (**अंहः**) पाप=दुष्कर्म को (**अति पर्षत्**) बहुत दूर कर दीजिये॥१२॥

ओं येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः।
त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये॥१३॥

-[ऋ० १०/३६/७]

अर्थ- हे परमेश्वर! आप (**समिद्धाग्निः**) सूर्य, विद्युत्, अग्नि, आदि को प्रज्ज्वलित करनेवाले, (**मनुः**) सर्वज्ञ हैं। आपने (**मनसा**) मन से, सङ्कल्पमात्र से (**येभ्यः**) जिनके लिए (**सप्त होतृभिः**) सप्त होताओं=2 आँख, 2 कान, 2 नाक और 1 मुँह के द्वारा किये जानेवाले (**प्रथमाम्**) सर्वश्रेष्ठ (**होत्राम्**) यज्ञ-विद्या को (**आयेजे**) आयोजित किया=रचा है। (**ते**) वे (**आदित्याः**) अदितिपुत्र=आपके उपासक विद्वान् हमें (**अभयं**) भयरहित (**शर्म**) सुख (**यच्छत**) प्रदान करें तथा (**नः**) हमारे (**स्वस्तये**) कल्याण के लिए (**सुपथा**) उत्तम मार्गों को (**सुगा**) सरलता से चलने के योग्य=सुगम (**कृत**) करें॥१३॥

ओं य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ॥१४॥

-[ऋ० १०/६३/८]

अर्थ- हे परमेश्वर! (**ये**) जो=आप (**प्रचेतसः**) सर्वोत्तम ज्ञानस्वरूप (**मन्तवः**) सबके मन्तव्य=मन की बातें जानने वाले (**विश्वस्य**) सम्पूर्ण (**स्थायुः**) स्थावर (**च**) और (**जगतः**) जङ्गम (**भुवनस्य**) जगत् के (**ईशिरे**) स्वामी हैं। (**देवासः**) हे दिव्यगुणों से युक्त परमात्मा! (**ते**) आप (**नः**) हमें (**कृताद्**) किये गए और (**अकृताद्**) न किये गए=भविष्य में

हो सकनेवाले (**एनसः**) पापकर्म से (**स्वस्तये**) कल्याण के लिए (**अद्य**) आज=अतिशीघ्र (**परि**) सब ओर से=पूर्णतः (पिपृत) बचाइये॥१४॥

ओं भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेऽंहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम्।
अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ॥१५॥

-[ऋ० १०/६३/९]

अर्थ- हे परमेश्वर! आप (**भरेषु**) यज्ञों और जीवन-सङ्घर्षों के अवसरों पर (**सुहवम्**) अपने भक्तों की पुकार अतिशीघ्र सुननेवाले (**इन्द्रम्**) हे परम ऐश्वर्यशाली (**अंहोमुचम्**) पाप और दुःखों से बचानेवाले, (**जनम्**) सबको उत्पन्न करनेवाले, (**अग्निम्**)अग्रणी, ज्ञानप्रकाशस्वरूप, (**मित्रम्**) सबके हितकारी, दयालु, (**वरुणम्**) वरणीय, सर्वश्रेष्ठ, न्यायकारी, (**भगम्**) भजनीय, स्तुति-उपासना करने-योग्य हैं। हम आपको (**सातये**) अन्न, ज्ञान और उत्तम गुणों की प्राप्ति के लिए तथा (**स्वस्तये**) सब भाँति कल्याण के लिए (**हवामहे**) पुकारते हैं। हे प्रभो! आपकी कृपा से (**द्यावा**) द्युलोक (**पृथिवी**) पृथिवीलोक (**मरुतः**) आकाश=अन्तरिक्षलोक हमारे लिए कल्याणकारी सिद्ध होवें॥१५॥

ओं सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये॥१६॥

-[ऋ० १०/६३/१०]

अर्थ- हे परमेश्वर (**सुत्रामाणं**) विघ्न-बाधाओं से रक्षा करनेवाली, (**पृथिवीम्**) अत्यन्त विस्तृत प्रभाववाली, (**द्याम्**) प्रदान करनेवाली, (**अदितिम्**) अखण्डित स्वरूपवाली, (**सुप्रणीतिम्**) सुन्दर रचनावाली (**अनागसम्**) पाप-रहित, (**सु+अरित्राम्**) उत्तम ऋत्विजों वाली (**अस्रवन्तीम्**) न रिसनेवाली=छिद्ररहित (**दैवीं नावम्**) यज्ञ-रूपी दिव्य नौका पर हम (**स्वस्तये**) कल्याण के लिए (**आरुहेम**) आरोहण करें, अर्थात् हम जीवन को सफल बनाने के लिए यज्ञों का अनुष्ठान करें॥१६॥

ओं विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः।
सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये॥१७॥

-[ऋ० १०/६३/११]

अर्थ- (**विश्वे यजत्राः**) हे सब प्रकार और सभी विद्वानों द्वारा यजनीय (**देवाः**) दिव्य गुणों के स्वामी, परमेश्वर! (**ऊतये**) रक्षा के लिए (**अधि वोचत**) हमें पूर्ण ज्ञान प्रदान कीजिये! (**दुरेवायाः**) दुर्दशा, दुराचार और (**अभिह्रुतः**) कुटिल प्रवृत्तियों से (**नः**) हमारी (**त्रायध्वम्**) रक्षा कीजिये। (**शृण्वतः**) पुकार सुननेवाले ईश्वर! हम (**वः**) आपको (**सत्यया**) सत्यवाणी से (**देवहूत्या**) विद्वानों द्वारा प्रशंसनीय वाणी से (**अवसे**) अपनी रक्षा के लिए और (**स्वस्तये**) कल्याण के लिए (**हुवेम**) पुकारते हैं, अतः आप हमारी रक्षा और हमारा कल्याण कीजिये।।१७।।

ओं अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः।
आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये ॥१८॥

-[**ऋ०** १०/६३/१२]

अर्थ- (**देवा**) हे दिव्य गुणों के स्वामी परमेश्वर! आप हमसे (**अमीवाम्**) रोग और रोगोत्पादक रोगाणुओं को (**अप**) नष्ट कर दीजिये, (**विश्वाम्**) सब मनुष्यों की (**अनाहुतिम्**) यज्ञ न करने की भावना को (**अप**) नष्टकर दीजिये, (**अरातिम्**) विद्या, धन, आदि का दान न देने की भावना को (**अप**) दूरकर दीजिये। (**अघायतः**) पाप का विचार करनेवाले व्यक्तियों की (**दुर्विदत्राम्**) दुष्ट प्रवृत्तियों को दूरकर दीजिये। हे परमात्मा! आप (**अस्मत्**) हमसे (**द्वेषः**) द्वेषभाव को, (**आरे**) दूर (**युयोतम्**) हटा दीजिये और (**नः**) हमारे (**स्वस्तये**) कल्याण के लिए (**उरु**) महान् (**शर्म**) सुख को (**आ**) पूर्णतः (**यच्छत**) प्रदान कराइये।।१८।।

ओं अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ॥१९॥

-[**ऋ०** १०/६३/१३]

अर्थ- (**आदित्यासः**) हे सर्वप्रकाशक परमेश्वर! आप (**यम्**) जिस मनुष्य को (**स्वस्तये**) कल्याण के लिए (**विश्वानि**) सम्पूर्ण (**दुरिता**) दुर्गुण-दुर्व्यसनों को (**अति**) दूर करके (**सुनीतिभिः**) उत्तम न्याय और **ध** र्म के मार्ग पर (**नयथ**) ले जाते हैं, (**सः**) वह (**मर्तः**) मनुष्य (**धर्मणः**

परि) धर्मानुसार आचरण करता हुआ (**अरिष्टः**) विघ्न-बाधाओं से रहित होकर सुख-प्राप्त करता है। वह (**प्र-प्रजाभिः जायते**) उत्तम सन्तानों से उन्नति को प्राप्त होता है और (**विश्व एधते**) सब प्रकार से अभ्युदय को प्राप्त करता है, अर्थात् हे परमेश्वर! आप हमारे कल्याण के लिए सम्पूर्ण दुःखों व दुर्गुणों को हमसे दूर कर हमें धर्म के मार्ग पर ले चलिये। हमारे मार्ग के सब विघ्नबाधाओं को दूर कर हमें सब सुख, उत्तम सन्तान और उन्नति को प्राप्त कराइये॥१९॥

ओं यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये॥२०॥

-[ऋ० १०/६३/१४]

अर्थ- (**देवासः**) हे दिव्यगुणों से युक्त परमेश्वर! हम (**यम्**) जिस=आपको (**वाजसातौ**) ज्ञान, अन्न और बल की प्राप्ति के लिए तथा (**मरुतः**) हे सर्वशक्तिमान् प्रभो! हम (**यम्**) आपको (**शूरसातौ**) शूरवीर-पराक्रमी सन्तान और (**हितेधने**) हितकारी धन की प्राप्ति के लिए (अवथ) पुकारते, आपका स्मरण करते हैं। (**प्रातर्यावाणम्**) ब्राह्ममुहूर्त में उपासनीय=स्मरणीय हे (**इन्द्रः**) परम ऐश्वर्यशाली, (**सानसिम्**) धनादि ऐश्वर्य का बल देनेवाले और (**अरिष्यन्तम्**) आधि-व्याधि को दूर करनेवाले परमदयालु, पूर्णस्वरूप परमात्मा! आपकी कृपा से हम (**स्वस्तये**) कल्याण के लिए (**रथम्**) रथ या शरीर-रूपी रथ पर (**आ-रुहेम**) भली-भाँति आरोहण, करें, अर्थात् हम इस पूर्ण स्वस्थ शरीर के माध्यम से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त करें॥२०॥

ओं स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन॥२१॥

-[ऋ० १०/६३/१५]

अर्थ-(**मरुतः**) हे परमैश्वर्यवान् परमात्मन्! आप (**पथ्यासु**) मार्गों में (**धन्वसु**) मरु=प्रदेशों में (**नः स्वस्ति**) हमारा कल्याण करें; (**वृजने**) अन्तरिक्ष=आकाश में तथा (**स्वर्वति**) द्युलोक में (**नः स्वस्ति**)हमारा

कल्याण करें। हे ईश्वर! आप (**पुत्रकृथेषु योनिषु**) पुत्रों=सन्तानों को जन्म देनेवाली स्त्रियों वा नारी-अङ्गों में (**स्वस्ति**) कल्याण=आरोग्य करें तथा (**राये**) इहलौकिक और पारलौकिक (**दधातन**) कल्याण करें॥२१॥

ओं स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति।
सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा॥२२॥

-[**ऋ० १०/६३/१६**]

अर्थ- हे परमेश्वर! (**या**) जो पृथिवी (**इत् हि**) निश्चय ही (**प्रपथे**) अच्छे मार्गों के लिए (**स्वस्ति**) कल्याणकारी है, (**या**) जो (**रेक्णस्वती**) धन-धान्य से परिपूर्ण है तथा (**वामम्**) धन ऐश्वर्य को (**अभि एति**) भली-भाँति प्राप्त कराती है (**सा नः अमा**) वही हमारा निवास-स्थान है, (**सा उ**) वही (**अरणे**) अरण्य=जङ्गल में (**निपातु**) हमारी रक्षा व पालन करे, (**देवगोपा**) दिव्य शक्तियों=अग्नि, जल, वायु, आकाश, आदि के द्वारा हमारी रक्षा करे तथा वही पृथिवी (**स्वावेशा भवतु**) हमारे लिए सुन्दर निवास-स्थानों के योग्य होवे॥२२॥

ओं इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशꣳस़ो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि॥२३॥ -[**यजुः० १/१**]

अर्थ- हे परमेश्वर! आप (**सविता**) सब जगत् की उत्पत्ति करनेवाले सम्पूर्ण ऐश्वर्ययुक्त (**देवः**) सब सुखों को देनेवाले हैं। (**वः**) आप हमारे जो (**वायवः**) प्राण, अन्तःकरण और इन्द्रियाँ (**स्थ**) हैं, उनको (**श्रेष्ठतमाय**) अत्युत्तम (**कर्म्मणे**) करने योग्य सर्वोपकारक यज्ञादि कर्मों के लिए (प्रार्पयतु) सर्वोपकारक अच्छी प्रकार संयुक्त करें। हम लोग (**इषे**) अन्नादि उत्तम-उत्तम पदार्थों और विज्ञानों की प्राप्ति के लिए और (**त्वा ऊर्जे**) आपके पराक्रम, अर्थात् उत्तम, रस की प्राप्ति के लिए (**भागम्**) सेवा करने-योग्य, धन और ज्ञान से भरे हुए भजनीय जगदीश्वर! (**त्वा**) हम सब प्रकार से आपका आश्रय प्राप्त करते हैं। हम सब (**आप्यायध्वम्**)

उन्नति को प्राप्त हों तथा हम लोगों के (**इन्द्राय**) परम ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए (**प्रजावती**) जिनके बहुत सन्तान हैं तथा जो (**अनमीवाः**) व्याधि और (**अयक्ष्माः**) जिनमें राजयक्ष्मा आदि रोग नहीं हैं, वे (**अघ्न्याः**) जो-जो गौ, आदि पशु, जो उन्नति करने योग्य है और जो कभी हिंसा करने-योग्य नहीं हैं, जो इन्द्रियाँ वा पृथिवी, आदि लोक हैं, उनको सदैव (**प्रार्पयतु**) नियत कीजिए। हे जगदीश्वर! आपकी कृपा से हम लोगों में से दु:ख देने के लिए कोई (**अघशंसः**) पापी वा (**स्तेनः**) चोर-डाकू (**मा ईशत**) मत उत्पन्न हो तथा आप इस (**यजमानस्य**) सर्वोपकार धर्म के सेवन करनेवाले मनुष्य के (**पशून्**) गौ-घोड़े और हाथी, आदि तथा लक्ष्मी और प्रजा की (**पाहि**) निरन्तर रक्षा कीजिए, जिससे इन पदार्थों के हरने को पूर्वोक्त कोई दुष्ट मनुष्य समर्थ न हो (**अस्मिन्**) हम धार्मिक (**गोपतौ**) पृथिवी, आदि पदार्थों की रक्षा चाहनेवाले सज्जनों के समीप (**बह्वीः**) बहुत-से उक्त पदार्थ (**ध्रुवाः**) निश्चल सुख के हेतु (**स्यात**) होवें॥२३॥

ओं आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः।
देवा नो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे॥२४॥

-[**ऋ० २५/१४**]

अर्थ- हे परमेश्वर! (**नः**) हमें (**भद्राः**) कल्याणकारी (**क्रतवः**) यज्ञ-कर्म में कुशल, (**अदब्धासः**) विनाश को प्राप्त न हुए, अर्थात् दम्भ-हिंसा, आदि दोषों से रहित, (**अपरितासः**) सब कार्यों में उत्तम और (**उद्भिदः**) दु:खों का विनाश करनेवाले विद्वान् (**विश्वतः**) सब ओर से (**आ यन्तु**) भली-भाँति प्राप्त होवें। (**देवाः**) ये विद्वान् (**यथा**) जैसे भी=हर प्रकार से (**सदम् इत्**) सदैव ही (**नः**) हमारी (**वृधे**) उन्नति के लिए (**असन्**) सहायक होवें तथा (**अप्रायुवः**) अप्रमादी रहकर (**दिवे-दिवे**) प्रतिदिन (**रक्षितारः**) हमारी रक्षा करनेवाली (**असन्**) होवें॥२४॥

ओं देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳरातिरभि नो निवर्तताम्।
देवानाꣳसख्यमुपसेदिमा वयं देवा नऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥२५॥

-[**यजुः० २५/१५**]

अर्थ- हे परमेश्वर! (**देवानाम्**) विद्वानों को (**भद्रा**) कल्याण करनेवाली (**सुमतिः**) उत्तम बुद्धि (**ऋजूयताम्**) कठिन कार्यों को सरल करनेवाले तथा सरल व निष्कपट आचरणवाले (**देवानाम्**) दिव्य विद्वानों की (**रातिः**) दानशीलता (**नः**) हमें (**अभिनिवर्तताम्**) सब ओर से प्राप्त होवे। (**वयम्**) हम लोग (**देवानाम्**) विद्वानों की (**सख्यम्**) मित्रता को (**उप सेदिम**) प्राप्त करें। (**देवाः**) वे दिव्यगुण-सम्पन्न, वेद-शास्त्र और आयुर्वेद, आदि के विद्वान् अपने उत्तम-ज्ञान और कर्म द्वारा (**जीवसे**) उत्कृष्ट दीर्घ-जीवन के लिए (**नः**) हमारी (**आयुः**) आयु को (**प्रतिरन्तु**) पूर्ण करावें।।२५।।

ओं तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥२६॥

-[यजुः० २५/१८]

अर्थ- हे जगदीश्वर! आप (**जगतः**) स्थावर और (**तस्थुषः**) जङ्गम जगत् के (**पतिम्**) स्वामी=रक्षक, (**धियं जिन्वम्**) बुद्धि से तृप्त, शुद्ध और आनन्दित करनेवाले, (**ईशानम्**) सबको वश में रखनेवाले, सर्वशक्तिमान्, सबके स्वामी हैं। (**वयम्**) यज्ञशील हम लोग (**तम्**) उक्त गुणयुक्त उस=आपको (**अवसे**) अपनी रक्षा के लिए (**हूमहे**) पुकारते हैं। हे परमात्मा! आप (**यथा**) इसी प्रकार (**नः**) हमारे (**वेदसाम्**) विद्या आदि धनों तथा सुखों को (**पूषा**) पुष्ट करनेवाले, (**रक्षिता**) सभी प्रकार की विपत्तियों से रक्षा करनेवाले (**पायुः**) पालक और आयु के रक्षक, (**अदब्धः**) हानि-हिंसा-रहित, करुणामय हैं तथा (**वृधे**) हमारी सब प्रकार उन्नति के लिए तथा (**स्वस्तये**) कल्याण के लिए (**असत्**) होवें, अर्थात् आप हमारी सब भाँति उन्नति तथा हमारा सब भाँति कल्याण करें।।२६।।

ओं स्वस्ति नऽ इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥२७॥

-[यजुः० २५/१९]

अर्थ- (**इन्द्रः**) हे परमैश्वर्यवान् (**वृद्धश्रवाः**) सब-कुछ और सर्वाधिक सुननेवाले परमेश्वर! आप (**नः**) हमारा (**स्वस्ति**) कल्याण करें।

आप (**पूषा**) सबका पालन-पोषण करनेवाले और (**विश्ववेदाः**) समस्त जगत् का सब-कुछ जाननेवाले हैं। हे जगदीश्वर! आप (**नः**) हमारा (**स्वस्ति**) कल्याण करें। हे (**तार्क्ष्यः**) सर्वत्र गतिशील, सर्वव्यापक और सबके जानने-योग्य (**अरिष्टनेमिः**) दुःखविनाशक और सुखप्रदाता परमात्मा! आप (**नः**) हमारा (**स्वस्ति**) कल्याण करें। हे (**बृहस्पतिः**) सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के स्वामी अथवा सम्पूर्ण वेद-ज्ञान के स्वामी जगदीश्वर! आप (**नः**) हमारा (**स्वस्ति**) कल्याण करें, अर्थात् हमें शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक सुख प्रदान करें॥२७॥

ओं भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।

स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥२८॥

-[यजुः० २५/२१]

अर्थ-(**देवाः**) हे दिव्य गुणों के स्वामी और (**यजत्राः**) यजनीय=उपासनीय परमेश्वर! आपकी कृपा से हम (**कर्णेभिः**) कानों से (**भद्रम्**) कल्याण ही (**पश्येम**) देखें। हे ईश्वर! (**तुष्टुवांसः**) आपकी स्तुति करते हुए हम (**स्थिरैः**) स्वस्थ और सुदृढ़ (**अङ्गैः**) अङ्गों से (**तनूभिः**) सम्पूर्ण शरीर से (**देवहितम्**) इन्द्रियों के लिए हितकर (**यद्**) जो (**आयुः**) पूर्ण आयु है, उसको (**वि+अशेमहि**) सुखपूर्वक प्राप्त करें॥२८॥

२ ३ १ २ ३ १ ३ ३ २ ३ १ २

ओं अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये।

१ २र ३ १ २

नि होता सत्सि बर्हिषि ॥ २९॥-[**साम०पू० १/१/१/१**]

अर्थ- (**अग्ने**) हे प्रकाशस्वरूप परमात्मा! (**गृणानः**) हम द्वारा स्तुति किए जाते हुए आप (**वीतये**) विद्या, आदि उत्तम गुणों को प्राप्त कराने के लिए और (**हव्यदातये**) भक्ति का उत्तम फल देने के लिए (**आयाहि**) हमें सब ओर से प्राप्त होइये (होता) यज्ञ में ऋत्विज् होता हुआ (**बर्हिषि नि सत्सि**) यज्ञ में आसन पर बैठिये २९।

ओं त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः।

देवेभिर्मानुषे जने ॥३०॥ -[साम० पू० १/१/२(२)]

अर्थ- हे **(अग्ने)** प्रकाश व ज्ञानस्वरूप जगदीश्वर! **(त्वम्)** आप **(यज्ञानाम्)** समस्त यज्ञों=शुभकार्यों के **(होता)** प्रेरक=देनेवाले, **(विश्वेषाम्)** सबका **(हितः)** करनेवाले हैं। आप **(देवेभिः)** अपने दिव्य गुणों के साथ हम **(मानुषे जने)** मननशील उपासक जनों के मन में विराजमान होइये, अर्थात् हम सच्चे मन से आपकी स्तुति-उपासना करें॥३०॥

ओं ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।

वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे॥३१॥

-[अथर्व० १/१/१]

अर्थ- हे **(वाचपतिः)** वेदवाणी के स्वामी परमेश्वर! **(ये त्रिषप्ता)** जो इक्कीस तत्त्व **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(रूपाणि)** प्राणियों या अवस्थाओं को **(बिभ्रतः)** धारण करते हुए, **(परियन्ति)** सब ओर से व्याप्त हो रहे हैं, हे **(वाचस्पतिः)** वेदवाणी के स्वामी परमात्मा! आप **(तेषां बला)** उनके बलों को **(मे तन्वः)** मेरे शरीर में **(अद्य)** आज **(दधातु)** धारण कराइये॥३१॥

त्रिषप्ता– तीन गुणा सात=इक्कीस, अर्थात् **पाँच** महाभूत (पृथिवी, अग्नि जल, वायु और आकाश)+ **पाँच** प्राण (प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान) + **पाँच** ज्ञानेन्द्रियाँ (आँख, नाक, कान, जिह्वा और त्वचा)+**पाँच** कर्मेन्द्रियाँ (वाणी, हाथ, पैर, पायु=गुदा और उपस्थ=जननेन्द्रिय)+**एक** अन्तःकरण।

इति स्वस्तिवाचनम्॥

अथ शान्तिकरणम्

'शान्ति' शब्द का अर्थ- 'शम्-उपशमे' धातु से क्तिन् प्रत्यय लगने से 'शान्ति' पद सिद्ध होता है, जिसके अर्थ हैं-शारीरिक व मानसिक सुख, सन्ताप की निवृत्ति, निरुपद्रवता आदि। अत: शान्तिकरण का अर्थ हुआ-सब प्रकार के सुख-शान्ति के लिए परमेश्वर से प्रार्थना करना।

ओ३म् शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या।
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ॥१॥

-[ऋ० ७/३५/१]

अर्थ- हे परमेश्वर! आपकी कृपा से (**इन्द्राग्नी**) विद्युत् और अग्नि (**अवोभिः**) अपने रक्षा-साधनों के साथ (**नः**) हमारे लिए (**शं भवताम्**) सुख-शान्तिकारी होवें। (**रातहव्याः**) जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं को देनेवाले (**इन्द्रावरुणा** वायु और जल (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्तिकारी होवें। (**इन्द्रा सोमा**) सूर्य और चन्द्रमा (**सुविताय**) ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए (**शं योः**) रोग और भय-निवारण के लिए (शम्) शान्तिदायक होवें। (**इन्द्रापूषणा**) आकाशस्थ मेघ और पृथिवी (**वाजसातौ**) जीवन-संग्राम में अथवा अन्न-धन की प्राप्ति में (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्तिकारक होवें॥**१**॥

ओं शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु॥२॥

-[ऋ० ७/३५/२]

अर्थ- हे प्रभो! आपकी कृपा से (**भगः**) यज्ञ और ऐश्वर्य (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्तिदायी होवें, (**शंसः**) उपदेश, स्तुति-प्रशंसा शिक्षा, आदि (**नः**) हमारे लिए (**उ**) निश्चय ही (**शम्**) सुखदायी (**अस्तु**) होवें, (**पुरन्धिः**) मेधावी विद्वज्जन (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखदायी होवें, (**रायः**) अन्न-धन, आदि (**उ**) निश्चय ही (**शम्**) कल्याणकारी (**सन्तु**) होवें। (**सत्यस्य**) सत्य सनातन धर्म तथा (**सुयमस्य**) सुन्दर नियमों के (**शंसः**) वचन या आज्ञाएँ (**नः**) हमारे लिए (**शम्**)

सुख-शान्तिकारी होवें और (**पुरुजातः**) सर्वोपरि (**अर्यमा**) न्यायाधीश-शासक (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखकारी होवें॥२॥

ओं शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु॥३॥

-[ऋ० ७/३५/३]

अर्थ- हे जगदीश्वर! आपकी कृपा और सङ्ग से (**धाता**) सबको धारण करनेवाला=सबका जीवन वायु (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखकारी होवे, (**उ**) और (**धर्त्ता**) सबका पोषण करनेवाला सूर्य (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखकारी (**अस्तु**) होवे, (उरूची) यह विशाल पृथिवी (**स्वधाभिः**) अन्नादि पदार्थों के साथ (**नः**) हम लोगों को (**शम्**) सुख देनेवाली (**भवतु**) होवे। (**बृहती**) महान् (**रोदसी**) द्युलोक, पृथिवीलोक और अन्तरिक्षलोक (**शम्**) सुख-शान्तिकारी होवें, (**अद्रिः**) मेघ (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखकारक होवें, (**देवानाम्**) विद्वानों के (**सुहवानि**) सुन्दर उपदेश (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्तिकारक (**सन्तु**) होवें॥३॥

ओं शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः॥४॥

-[ऋ० ७/३५/४]

अर्थ- हे जगदीश्वर! आपकी कृपा से (**ज्योतिरनीकः**) ज्योति को सेना के समान रखनेवाला (**अग्निः**) अग्नि (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुखरूप (**अस्तु**) होवे (**अश्विना**) व्यापक पदार्थ=सूर्यचन्द्रादि (**शम्**) सुखरूप होवें और (**मित्रावरुणौ**) प्राण और उदान अथवा दिन और रात्रि दोनों (**नः**) हम (**सुकृताम्**) सुन्दर-कर्म करनेवालों के (**सुकृतानि**) धर्माचरण (**शम्**) सुखरूप (**सन्तु**) होवें और (**इषिरः**) शीघ्र जानेवाला (**वातः**) वायु (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुखरूप होकर (**अभि**) सब ओर से (**वातु**) बहे॥४॥

ओं शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु।
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः॥५॥

-[ऋ० ७/३५/५]

अर्थ- हे जगदीश्वर! (**पूर्वहूतौ**) पूर्वकल्प के समान वर्त्तमान कल्प में भी प्रशंसनीय गुण-कर्मवाले (**द्यावा पृथिवी**) द्युलोक, पृथिवीलोक (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुखदायक हों, (**दृशये**) देखने के लिए (**अन्तरिक्षम्**) भूमि और सूर्य के बीच का आकाश (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुखरूप हो। (**ओषधीः**) ओषधि तथा (**वनिनः**) वन (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप (**भवन्तु**) होवें, (**रजसः**) सब लोकों को प्रकाशित करनेवाले (**पतिः**) स्वामी (**जिष्णु**) सूर्य (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप (**अस्तु**) होवें॥५॥

ओं शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः।
शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु॥६॥

-[ऋ० ७/३५/६]

अर्थ- हे जगदीश्वर! आपकी कृपा से (**वसुभिः**) पृथिव्यादिकों के साथ (**देवः**) दिव्य गुण-कर्म-स्वभावयुक्त (**इन्द्रः**) बिजुली वा सूर्य (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप होवे और (**आदित्येभिः**) संवत्सर के महीनों के साथ (**सुशंसः**) प्रशंसा करने योग्य (**वरुणः**) जल-समुदाय (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुखरूप (**अस्तु**) होवे। (**रुद्रेभिः**) प्राणों के साथ (**जलाषः**) दुःख-निवारण करनेवाला (**रुद्रः**) जीव (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुखरूप होवे, (**इह**) इस लोक में (**त्वष्टा**) शिल्पी के समान सदसद् विवेकी, तेजस्वी विद्वान्, (**ग्नाभिः**) वेद-वाणियों के साथ (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुख-शान्ति का उपदेश सुनाए॥६॥

ओं शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः॥७॥

-[ऋ० ७/३५/७]

अर्थ- हे जगदीश्वर! (**सोमः**) चन्द्रमा (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप (**भवतु**) होवे (**ब्रह्म**) वेद, धन, अन्न, ज्ञान व बल (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप होवे, (**ग्रावाणः**) मेघ (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुखरूप (**सन्तु**) होवें, (**यज्ञाः**) यज्ञ [अग्निहोत्र से शिल्प-यज्ञपर्यन्त]

(**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्, उ**) सुखरूप ही होवें। (**स्वरूणाम्**) यज्ञशाला के स्तम्भ, शब्दों के (**मितयः**) प्रमाण [फैलाव], शुभकर्मों की मर्यादाएँ (**शम्**) सुखरूप (**भवन्तु**) होवें, (**प्रस्वः**) उत्पन्न होनेवाली, औषधियाँ तथा उत्तम सन्तान उत्पन्न करनेवाली नारियाँ (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप होवें और (**वेदिः**) यज्ञवेदि=हवन-कुण्ड आदि हमारे लिए (**शम्, उ**) सुखरूप ही (**अस्तु**) होवे॥७॥

शं न सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः॥८॥

-[**ऋ०** ७/३५/८]

अर्थ- हे परमेश्वर! (**उरुचक्षाः**) जिससे बहुत दर्शन होते हैं विशाल प्रकाशवाला वह (**सूर्यः**) सूर्य (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुखरूप (**उदेतु**) उदित होवे, (**चतस्रः**) चार (**प्रदिशः**) बड़ी दिशाएँ (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुखरूप (**भवन्तु**) होवें, (**ध्रुवयः**) अपने स्थान में स्थिर (**पर्वताः**) पर्वत (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुखरूप (**भवन्तु**) होवें, (**सिन्धवः**) नदी वा समुद्र (**नः**) हम लोगों के लिए (**शम्**) सुखरूप होवें और (**आपः**) जल वा प्राण (**शम्**) सुखरूप (उ) ही (**सन्तु**) होवें॥८॥

ओं शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः॥९॥

-[**ऋ०** ७/३५/९]

अर्थ- हे परमेश्वर! आपकी कृपा से (**अदितिः**) यह पृथिवी माता (**व्रतेभिः**) अपने नियमों से (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्ति देनेवाले (**भवन्तु**) होवें। (**विष्णुः**) यज्ञ, सूर्य (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) कल्याणकारी होवें, (**पूषा**) सबका पोषण करनेवाले मेघ और चन्द्रमा (**उ**) भी (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्तिकारक (**अस्तु**) होवें, (**भवित्रम्**) हमारे कर्म (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्तिकारक (**अस्तु**) होवें, (**भवित्रम्**) हमारे कर्म (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्तिकारक होवें और (**वायुः**)

वायु (**उ**) भी हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्तिकारक (**अस्तु**) होवे॥९॥

ओं शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः॥१०॥

-[ऋ० ७/३५/१०]

अर्थ- हे (**देवः**) दिव्यगुणों से युक्त स्वयं प्रकाशमान्, सब सुखों के दाता, (**सविता**) सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, (**त्रायमाणः**) सबकी रक्षा करनेवाले परमेश्वर! आप (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्ति देनेवाले होवें, (**विभातीः**) विशेष दीप्तिवाली (**उषसः**) प्रभातवेलाएँ (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्ति देनेवाली (**भवन्तु**) होवें। (**पर्जन्यः**) मेघ (**नः प्रजाभ्यः**) हम सब प्रजाओं के लिए (**शम्**) सुखरूप (**भवतु**) होवे; (**क्षेत्रस्य**) हे जगत्-रूपी क्षेत्र के स्वामी (**शम्भुः**) सुखदाता परमात्मा! आप (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप (**अस्तु**) होवें॥१०॥

ओं शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः॥११॥

-[ऋ० ७/३५/११]

अर्थ- हे परमात्मा! आपकी कृपा से हमारे गुणों के आचार से (**देवाः**) विद्यादि शुभ गुणों के देनेवाले (**विश्व देवाः**) सब विद्वान् जन (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप (**भवन्तु**) होवें (**सरस्वती**) विद्या सुशिक्षायुक्त वाणी (**धीभिः**) उत्तम बुद्धियों के (**सह**) साथ (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप (**अस्तु**) होवें (**अभिषाचः**) जो आभ्यन्तर आत्मा से सम्बन्ध रखते हैं, वे आत्मीयजन (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप होवें और (**रातिषाचः**) विद्यादि का दान देनेवाले हमारे लिए (**शमु**) सुखरूप (**उ**) ही होवें तथा (**दिव्याः**) शुभ गुण-कर्म-स्वभावयुक्त (**पार्थिवाः**) पृथिवी में विदित बहुमूल्य पदार्थ (**शम्**) सुखरूप होवें और (**अप्याः**) जलों में उत्पन्न मोती आदि पदार्थ हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप होवें॥११॥

ओं शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः।
शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु॥१२॥

-[ऋ० ७/३५/१२]

अर्थ- हे जगदीश्वर! (**हवेषु**) हवन, आदि अच्छे कामों में (**सत्यस्य**) सत्यभाषण, आदि व्यवहार के (**पतयः**) पति=पालन करनेवाले सज्जन (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप (**भवन्तु**) होवें, (**अर्वन्तः**) उत्तम घोड़े (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप होवें, (**गावः**) गौएँ (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप (**उ**) ही (**सन्तु**) होवें (**सुकृतः**) धर्मात्मा (**सुहस्ताः**) सुन्दर कामों में हाथ डालनेवाले (**ऋभवः**) बुद्धिमान जन् (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप होवें (**पितरः**) पितृजन=माता-पिता, आचार्य, आदि रक्षकजन (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप (**भवन्तु**) होवें॥१२॥

ओं शं नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः।
शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा॥१३॥

-[ऋ० ७/३५/१३]

अर्थ- हे (**अज**) अजन्म, (**एकपाद्**) एक-पाद में समस्त ब्रह्माण्ड को धारण करनेवाले=एकरस व्यापक=सर्वव्यापक, (**देवः**) सब सुखदाता परमेश्वर! आप (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखरूप (**अस्तु**) होवें। (**बुध्न्यः**) अन्तरिक्ष में रहनेवाला (**अहिः**) मेघ (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्तिदायी होवे, (**समुद्रः**) समुद्र (**शम्**) सुखदायक होवे। (**अपाम्**) जलों में (**पेरुः**) पार लगानेवाली (**नपात्**) जिसके पैर नहीं हैं, वह नौका (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखदायक (**अस्तु**) होवे और (**देवगोपाः**) सबकी रक्षा करनेवाला (**पृश्निः**) आकाश=अन्तरिक्ष (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखकारी (**भवतु**) होवे॥१३॥

ओं इन्द्रो विश्वस्य राजति। शन्नोऽअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥१४॥

-[यजुः० ३६/८]

अर्थ-(**इन्द्रः**) हे परमैश्वर्यशाली परमेश्वर! आप (**विश्वस्य**) सम्पूर्ण संसार के (**राजति**) प्रकाशक एवं शासक हैं। आपकी कृपा से (**नः**) हमारे लिए, (**द्विपदे**) हमारे पुत्रादि सन्तानों के लिए (**शम्**) सुख-शान्ति होवें तथा (**चतुष्पदे**) हमारे गौ, आदि पशुओं के लिए भी (**शम्**) सुख-शान्ति होवें॥१४॥

ओं शन्नो वातः पवताᳪं शन्नस्तपतु सूर्य्यः।
शन्नः कनिक्रदद् देवः पर्जन्यो ऽअभि वर्षतु॥१५॥

-[यजुः० ३६/१०]

अर्थ- हे परमेश्वर! आपकी कृपा से (**वातः**) पवन (**नः**) हमारे लिए सुखकारी (**पवताम्**) चले, (**सूर्यः**) **सूर्य** (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्तिकारी (**तपतु**) तपे=प्रकाशित होवे। (**कनिक्रदत्**) अत्यन्त शब्द करता हुआ, (**देवः**) उत्तम गुणयुक्त विद्युत्-रूप अग्नि (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) कल्याणकारी होवे और (**पर्जन्यः**) मेघ हमारे लिए (**अभि वर्षतु**) सब ओर से सुखदायिनी वर्षा करे॥१५॥

ओ अहानि शम्भवन्तु नः शᳪं रात्रीः प्रति धीयताम्।
शन्न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्नऽइन्द्रावरुणा रातहव्या।
शन्न इन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमासुविताय शँयोः ॥१६।

(**यजुः ३६/११**)

अर्थ- हे परमेश्वर! आपकी कृपा से (**अहानि**) दिन (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखकारी (**भवन्तु**) होवें, (**रात्री**) रात्रियाँ (**शम्**) सुख-शान्ति को (**प्रतिधीयताम्**) धारण करें। (**इन्द्राग्नी**) विद्युत् और अग्नि (**अवोभिः**) अपने रक्षात्मक उपायों=अपनी दीप्ति-शक्ति से (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखकारी (**भवताम्**) होवें (**रातहव्या**) ग्रहण करने-योग्य सुख देनेवाले (**इन्द्रावरुणा**) वायु और जल अथवा प्राण और अपान (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखकारी होवें। (**वाजसातौ**) जीवन-संग्राम में (**इन्द्रापूषणा**) आकाश और पृथिवी (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुखकारी होवें और (**इन्द्रासोमा**) सूर्य और चन्द्र (**शं योः**) सुख को (**सुविताय**) प्रदान करने के लिए (**नः**) हमारे लिए (**शम्**) सुख-शान्तिप्रद होवें॥१६॥

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शँयोर भिस्त्रवन्तु नः॥१७॥ -[**यजुः० ३६/१२**]

अर्थ- हे जगदीश्वर! (**देवीः**) दिव्य गुणयुक्त उत्तम (**आपः**) जल (**अभिष्टये**) शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक आदि अभीष्ट सुखों की प्राप्ति

के लिए और (**पीतये**) पीने के लिए (**नः**) हमको (**शम्**) सुखकारी (**भवन्तु**) होवें। आप (**नः**) हमारे लिए (**शंयोः**) सुख की (**अभिस्रवन्तु**) वर्षा सब ओर से करो॥१७॥

ओं द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव सा मा शान्तिरेधि॥१८॥ -[यजुः० ३६/१७]

अर्थ- हे परमेश्वर! आपकी कृपा से (**द्यौः**) सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्रों से प्रकाशमान् द्युलोक (**शान्तिः**) सुख-शान्तिकारी होवे, (**अन्तरिक्षम्**) द्युलोक और पृथिवीलोक के मध्य में स्थित आकाश=अवकाश=रिक्त स्थान (**शान्तिः**) सुख-शान्तिकारक होवे। (**पृथिवी**) पृथिवीलोक, भूमि और भूमि से उत्पन्न सभी पदार्थ तथा पृथिवी पर रहनेवाले सभी प्राणी (**शान्तिः**) सुख-शान्तिदायी होवें। (**आपः**) नदी, कूप, समुद्र और वर्षा के जल (**शान्तिः**) सुख-शान्तिदायी होवें। (**ओषधयः**) औषधियाँ (**शान्तिः**) सुख-शान्तिदायी होवें। (**वनस्पतयः**) वनस्पतियाँ (**शान्तिः**) सुख-शान्तिकारी होवें। (**विश्वे देवाः**) सब विद्वान् लोग (**शान्तिः**) शान्ति देनेवाले=उपद्रव-निवारक होवें। (**ब्रह्म**) हे प्रभो! आप तथा वेद-ज्ञान (**शान्तिः**) सुख-शान्तिकारी होवें। (**सर्वम्**) संसार के सभी पदार्थ (**शान्तिः**) सुख-शान्तिदायी होवें। (**शान्तिः एव शान्तिः**) जीवन में शान्ति ही शान्ति होवे। (**सा**) सबको सुख प्रदान करनेवाली वह (**शान्तिः**) शान्ति (**मा**) मुझे भी (**एधि**) प्राप्त होवे॥१८॥

तच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥१९॥ -[यजुः० ३६/२४]

अर्थ- हे परमेश्वर! (**तत्**) वह=आप (**चक्षुः**) सबके द्रष्टा और सबको दृष्टि देनेवाले, (**देवहितम्**) दिव्य गुण-कर्म और स्वभाववाले विद्वानों के लिए हितकरी (**पुरस्तात्**) सृष्टि के पूर्व, मध्य तथा पश्चात् विद्यमान रहनेवाले (**शुक्रम्**) शुद्धस्वरूप (**उत् चरत्**) उत्कृष्टता के साथ सबके ज्ञाता और सर्वत्र व्याप्त हैं। आपकी कृपा से हम (**शरदः शतं**

पश्येम) सौ वर्षों तक आपको व जगत् को देखें, (**शरदः शतं जीवेम**) सौ वर्षों तक प्राणों को धारण कर जीवें, (**शरदः शतं शृणुयाम**) सौ वर्षों तक शास्त्रों से मङ्गल-वचनों को सुनें, (**शरदः शतं प्रब्रवाम**) सौ वर्षों तक आपके गुणों का उपदेश करें, (**शरदः शतम्**) सौ वर्षों तक (**अदीनाः**) अदीन=स्वतन्त्र, स्वस्थ, समृद्ध और सम्भ्रान्त (**स्याम**) रहें, (**च**) और आपकी कृपा से ही (**शरदः शतात् भूयः**) सौ वर्षों के बाद भी हम लोग देखें, जीवें, सुनें, वेदोपदेश करें और स्वाधीन रहें, अर्थात् सौ वर्षों के बाद भी हम स्वस्थ, सुखी और स्वतन्त्र रहें, हमारा मन पवित्र रहे और हम आपकी उपासना से सदैव आनन्दित रहें॥१९॥

ओं यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।

दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥२०॥

-[**यजुः० ३४/१**

अर्थ- हे जगदीश्वर! आपकी कृपा से (**यत्**) जो (**दैवम्**) आत्मा में रहनेवाला या जीवात्मा का साधन (**दूरं गमम्**) दूर जानेवाला, मनुष्य को दूर तक ले जानेवाला वा अनेक पदार्थों को ग्रहण करनेवाला (**ज्योतिषाम्**) शब्द, आदि विषयों के प्रकाशकों= श्रोत्र आदि इन्द्रियों को (**ज्योतिः**) प्रवृत्त करनेवाला या उनका प्रकाशक (**एकम्**) एक (**जाग्रतः**) जाग्रत अवस्था में (**दूरम्**) दूर-दूर (**उत् ऐति**) भागता है (**उ**) और (**तत्**) जो (**सुप्तस्य**) सोते हुए का (**तथा, एव**) उसी प्रकार (**एति**) भीतर अन्तःकरण में जाता है (**तत्**) वह (**मे**) मेरा (**मनः**) मन (**शिवसङ्कल्पम्**) कल्याणकारी धर्म-विषयक इच्छावाला (**अस्तु**) होवे॥२०॥

ओं येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।

यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥२१॥

-[**यजुः० ३४/२**]

अर्थ- हे परमेश्वर! आपके सङ्ग से (**येन**) जिससे (**अपसः**) धर्मनिष्ठ (**मनीषिणः**) विद्वान्, मन को जीतनेवाले (**धीराः**) ध्यान करनेवाले बुद्धिमान् लोग (**यज्ञे**) अग्निहोत्र वा धर्मयुक्त व्यवहार वा योग-यज्ञ में और

(विदथेषु) विज्ञान-सम्बन्धी और युद्धादि व्यवहारों में **(कर्माणि)** अत्यन्त इष्ट-कर्मों को **(कृण्वन्ति)** करते हैं। **(यत्)** जो **(अपूर्वम्)** सर्वोत्तम गुण-कर्म-स्वभाववाला **(प्रजानाम्)** प्राणिमात्र के **(अन्तः)** अन्तःकरण में **(यक्षम्)** स्थित या एकीभूत हो रहा है **(तत्)** वह **(मे)** मेरा मन **(शिवसङ्कल्पम्)** धर्मेष्ट **(अस्तु)** होवे ।।२१।।

ओं यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।

यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥२२॥

-[**यजुः० ३४/३**]

अर्थ- हे जगदीश्वर! आपके जताने से **(यत्)** जो **(प्रज्ञानम्)** विशेषकर ज्ञान का उत्पादक बुद्धिरूप **(उत)** और **(चेतः)** स्मृति का साधन **(धृतिः)** धैर्यस्वरूप वृत्ति **(च)** और लज्जादि कर्मों का हेतु **(प्रजासु)** मनुष्यों के **(अन्तः)** अन्तःकरण में आत्मा का साथी होने से **(अमृतम्)** नाशरहित **(ज्योतिः)** प्रकाशयुक्त है, **(यस्मात्)** जिसके **(ऋते)** बिना **(किम् चन)** कोई भी **(कर्म)** काम **(न, क्रियते)** नहीं किया जाता **(तत्)** वह **(मे)** मुझ जीवात्मा का **(मनः)** सब कामों का साधनरूप मन **(शिवसङ्कल्पम्)** कल्याणकारी परमात्मा में इच्छा रखनेवाला **(अस्तु)** होवे।।२२।।

ओं येनेदम्भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्।

येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥२३॥

-[**यजुः० ३४/४**]

अर्थ- **(अमृतेन)** हे अविनाशी परमेश्वर! **(येन)** जिस मन के द्वारा योगीजन **(इदम्)** इन **(सर्वम्)** सब **(भूतम्)** भूतकाल, **(भुवनम्)** वर्त्तमानकाल और **(भविष्यत्)** भविष्यत्काल के व्यवहारों को **(परिगृहीतम्)** जानते हैं। **(येन)** जिस मन के द्वारा **(सप्तहोता)** सात होताओं=**५** इन्द्रियाँ, **१** बुद्धि और **१** आत्मा द्वारा किया जानेवाला **(यज्ञः)** अग्निहोत्रादि यज्ञ अथवा ज्ञान-विज्ञानयुक्त शुभकर्म **(तायते)** सम्पन्न एवं विस्तृत किया जाता है **(तत्)** वह **(मे)** मेरा **(मनः)** योगयुक्त मन **(शिवसङ्कल्पमस्तु)** मोक्षरूप सङ्कल्पवाला होवे।।२३।।

ओं यस्मिन्नृचः साम यजूᳬषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिँश्चित्तᳬसर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥२४॥

-[यजुः0 34/5]

अर्थ- हे परमेश्वर! (**यस्मिन्**) जिस मन में (**रथनाभाविव, अराः**) रथ के, पहियों के, बीच के काष्ठ में लगे अरों की भाँति (**ऋचः**) ऋग्वेद (**साम**) सामवेद (**यजूंषि**) यजुर्वेद और (**यस्मिन्**) जिसमें अथर्ववेद (**प्रतिष्ठिता**) सब ओर से स्थित हैं। (**यस्मिन्**) जिसमें (**प्रजानाम्**) प्राणियों का (**सर्वम्**) समग्र (**चित्तम्**) सर्व पदार्थ-सम्बन्धी ज्ञान (**ओतम्**) सूत में मणियों के समान है (**तत्**) वह (**मे**) मेरा (**मनः**) मन (**शिवसङ्कल्पम्**) कल्याणकारी वेदादि सत्यशास्त्रों का प्रचार-रूप सङ्कल्पवाला (**अस्तु**) होवे॥२४॥

ओं सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान् नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥२५॥

-[यजुः० ३४/६

अर्थ- हे परमेश्वर! (**यत्**) जो (**सुषारथिः**) जैसे चतुर सारथि गाड़ीवान् (**अश्वानिव**) लगाम से घोड़ों को चलाता है, वैसे (**मनुष्यान्**) मनुष्यादि प्राणियों को (**नेनीयते**) शीघ्र-शीघ्र इधर-उधर घुमाता है और (**अभीशुभिः**) जैसे रस्सियों से (**वाजिनः**) वेगवान् घोड़ों को सारथि वश में करता है, वैसे नियम में रखता है (**यत्**) जो (**हृत्प्रतिष्ठम्**) हृदय में स्थित (**अजिरम्**) विषयादि में प्रेरक वा वृद्धादि अवस्था से रहित और (**जविष्ठम्**) अत्यन्त वेगवान् है (**तत्**) वह (**मे**) मेरा (**मनः**) मन (**शिवसङ्कल्पम्**) मङ्गलमय नियमोंवाला (**अस्तु**) होवे॥२५॥

ओं स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते।

शं राजन्नोषधीभ्यः ॥२६॥ **-[साम० उत्तरा० १/१/३]**

अर्थ- हे (**राजन्**) प्रकाशमान् परमेश्वर! (**सः**) परमपवित्र और सब सुख देने से समर्थ आप (**नः**) हमें (**पवस्व**) पवित्र कर दो। हे प्रभो! आप हमारे (**गवे**) गौ, आदि पशुओं के लिए (**शम्**) सुख-शान्ति प्रदान करो, हमारे (**जनाय**) सन्तानों, मित्रों, आदि सभी मनुष्यों के लिए सुख-शान्ति

प्रदान करो, (**अर्वते**) प्राणों अथवा अश्वों के लिए सुख-शान्ति प्रदान करो तथा (**औषधीभ्यः**) औषधियों द्वारा (**शम्**) सुख-शान्ति प्रदान करो॥२६॥

ओं अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे।

अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु॥२७॥

-[अथर्व० १९/१५/५]

अर्थ- हे परमेश्वर! आप (**नः**) हमारे लिए (**अन्तरिक्षम्**) आकाश को (**अभयं**) भयरहित (**करति**) कर दो, (**द्यावा पृथिवी**) द्युलोक और पृथिवीलोक (**उभे इमे**) इन दोनों को भयरहित कर दो। (**नः**) हमें (**पश्चात्**) पीछे से (**अभयम्**) अभय प्राप्त होवे, (**पुरस्तात्**) सामने से (**अभयम्**) अभय प्राप्त होवे, (**उत्तरात् अभयम्**) उत्तम या ऊपर की दिशा से (**अभयम्**) अभय प्राप्त होवे, (**अधरात्**) दक्षिण या नीचे से (**अभयम्**) अभय (**अस्तु**) प्राप्त होवे॥२७॥

ओं अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।

अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु॥२८॥

-[अथर्व० १९/१५/६]

अर्थ- हे परमेश्वर! आपकी कृपा से हमें (**मित्रात्**) मित्रों से (**अभयम्**) भय न होवे, (**अमित्रात्**) शत्रुओं से (**अभयम्**) भय न होवे, (**ज्ञातात्**) प्रत्यक्ष में या जाने हुए लोगों से (**अभयम्**) भय न होवे, (**परोक्षात्**) परोक्ष में या अज्ञात लोगों से (**अभयम्**) भय न होवे। (**नः**) हमें (**नक्तम्**) रात्रि में चोर-डाकू आदि से (**अभयम्**) भय न होवे, (**दिवा**) दिन में (**अभयम्**) भय न होवे, (**सर्वाः**) सब (**आशाः**) दिशाएँ = सब दिशाओं में रहने वाले प्राणी और वस्तुएँ (**मम**) मेरे (**मित्रं**) मित्र (**भवन्तु**) हो जावें, अर्थात् हमारा जीवन सदैव और सब ओर से भय-रहित हो जावे॥28॥

इति शान्तिकरणम्॥

अथ सामान्यप्रकरणम्

अथ ऋत्विग्वरणम्

यजमानोक्तिः -**'ओमावसोः सदने सीद।'**

अर्थ- यजमान कहे-मैं परमेश्वर का स्मरण करते हुए आपसे प्रार्थना करता हूँ कि 'आप (**वसोः**) यज्ञ के (**सदने**) स्थान में या आसन पर (**आ**) यज्ञ की समाप्ति तक (**सीद**) बैठिये।'

[यजमान इस मन्त्र का उच्चारण करके ऋत्विक् को यज्ञ कराने की इच्छा से स्वीकार करने हेतु प्रार्थना करे]

ऋत्विगुक्तिः-**'ओं सीदामि।'**

अर्थ- ऋत्विक कहे- परमात्मा का स्मरण करते हुए 'मैं बैठता हूँ।'

[ऐसा कहकर, जो आसन ऋत्विक् के लिए बिछाया हो, उस पर बैठे।]

यजमानोक्तिः **'अहमद्योक्तकर्मकरणाय भवन्तं वृणे।'**

अर्थ- यजमान कहे-मैं आज कहे हुए (सङ्कल्पित) कर्म को कराने के लिए आपको स्वीकार करता हूँ।

अथवा

ओं तत्सत् श्रीब्रह्मणो द्वितीयप्रहरार्द्धे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे सृष्ट्यब्दे.......... **वैक्रमाब्दे**............ **संवत्सरे**.......... **अयने**.......... **ऋतौ**............ **मासे**............ **पक्षे**........... **वासरे**.......... **नक्षत्रे**........ **लग्ने**.......... **मुहूर्ते**............ **जम्बूद्वीपे**............. **भरतखण्ड आर्यावर्त्तैकदेशान्तर्गते**............. **प्रान्ते**......... **मण्डले**......... **नगरे**......... **अहमद्य**........... **कर्मकरणाय भवन्तं वृणे।**

ऋत्विगुक्तिः **–वृतोऽस्मि।**

ऋत्विक् कहे–मैं स्वीकार करता हूँ।

आचमन-विधिः

जो व्यक्ति यज्ञ करने बैठे हों, वे सभी अपने-अपने जलपात्र से अपने दाहिने हाथ की हथेली में थोड़ा जल लेकर निम्नलिखित मन्त्रों से तीन आचमन करें।

हथेली में इतना जल ग्रहण करे, जो कण्ठ से नीचे हृदय प्रदेश तक पहुँचे, इससे न अधिक और न कम हो। आचमन अँगूठे के मूलभाग तथा हथेली के मध्यभाग से मुँह लगाकर करना चाहिए। आचमन के पश्चात् दाहिने हाथ को स्वच्छ जल से धो लेना चाहिए।

आचमन-मन्त्राः

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा॥१॥

इससे पहला आचमन करें।

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**अमृत**) अमर परमेश्वर! आप (**उपस्तरणम्**) बिछौना, अर्थात् सम्पूर्ण संसार के आधार और आश्रय (**असि**) हैं, (**स्वाहा**) यह सत्यवचन मैं सत्यनिष्ठापूर्वक मानकर कहता हूँ॥१॥

ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा॥२॥

इससे दूसरा आचमन करें।

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**अमृत**) अविनाशी परमात्मन्! आप (**अपिधानम्**) ऊपर का ओढ़ना, अर्थात् सदैव सबके रक्षक (**असि**) हैं, (**स्वाहा**) यह सत्यवचन मैं सत्यनिष्ठापूर्वक मानकर कहता हूँ॥२॥

ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीश्रयताम् **स्वाहा॥३॥**

इससे तीसरा आचमन करें।

-[तैत्तिः आरः १०/३२, ३५;

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आपकी कृपा से (**सत्यम्**) सत्य-ज्ञान, सत्यभाषण और सत्यव्यवहार, (**यशः**) यश एवं प्रतिष्ठा, (**श्रीः**) शोभा=शोभन व्यवहार, स्वास्थ्य और (**श्रीः**) धन-ऐश्वर्य (**मयि**) मुझमें (**श्रयताम्**) स्थित होवें, अर्थात् मुझे प्राप्त होवें, (**स्वाहा**) मेरा यह वचन सत्य सिद्ध होवे॥३॥

अङ्गस्पर्श-विधिः

आचमन करने के पश्चात् बाईं हथेली में थोड़ा जल लेकर दाएँ हाथ की मध्यमा और अनामिका अँगुलियों से जल का स्पर्शकर निम्नलिखित मन्त्रों से पहले दाएँ और तत्पश्चात् बाएँ अङ्गों का स्पर्श करें-

ओं वाङ्मऽआस्येऽस्तु॥१॥ इससे मुख,

अर्थ-(ओम्) हे रक्षक परमेश्वर! **(मे)** मेरे **(आस्ये)** मुख में **(वाक्)** बोलने की शक्ति **(अस्तु)** पूर्ण आयुपर्यन्त विद्यमान रहे॥**१**॥

ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु॥२॥ इससे नासिका के दोनों भाग,

(ओ३म्) हे जीवनदाता परमेश्वर! **(मे)** मेरे **(नसोः)** दोनों नासिका-भागों में **(प्राणः)** प्राणशक्ति **(अस्तु)** पूर्ण आयुपर्यन्त बनी रहे॥**२**॥

ओम् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ॥३॥ इस मन्त्र से दोनों आँखों,

अर्थ-(ओम्) हे मार्गदर्शक परमेश्वर! **(मे)** मेरी **(अक्ष्णोः)** दोनों आँखों में **(चक्षुः)** दर्शन-शक्ति **(अस्तु)** पूर्ण आयुपर्यन्त विद्यमान रहे॥**३**॥

ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ॥४॥ इस मन्त्र से दोनों कानों,

(ओम्) अपने भक्तों की पुकार सुननेवाले परमेश्वर! **(मे)** मेरे **(कर्णयोः)** दोनों कानों में **(श्रोत्रम्)** श्रवण-शक्ति **(अस्तु)** पूर्ण आयुपर्यन्त विद्यमान रहे॥**४**॥

ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु ॥५॥ इस मन्त्र से दोनों भुजाओं,

अर्थ-(ओम्) हे विघ्नविनाशक परमेश्वर! **(मे)** मेरी **(बाह्वोः)** दोनों भुजाओं में **(बलम्)** बल, शक्ति, सामर्थ्य **(अस्तु)** पूर्ण आयुपर्यन्त विद्यमान रहे॥5॥

ओम् ऊर्वोर्म ओजोऽस्तु ॥६॥ इस मन्त्र से दोनों जङ्घाओं,

(ओम्) हे पराक्रमशालिन् परमेश्वर! **(मे)** मेरी **(ऊर्वोः)** दोनों जङ्घाओं में **(ओजः)** बल, पराक्रम-सहित चलने-दौड़ने और भार-वहन करने का सामर्थ्य **(अस्तु)** पूर्ण आ   त विद्यमान रहे॥**६**॥

ओम् अरिष्टानि मेंऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु॥७॥

-[पारस्करगृ0 कण्डिका 3/ 25]

अर्थ-(**ओम्**) है रक्षक परमेश्वर! (**मे**) मेरा (**तनूः**) तनु=शरीर (**सह**) साथ ही (**मे**) मेरे (**तन्वा**) शरीर के (**अङ्गानि**) सब अङ्ग (**अरिष्टानि**) रोग-दोषरहित तथा शक्ति-सम्पन्न (**संन्तु**) पूर्ण आयुपर्यन्त बने रहें ॥७॥

समिधाचयनम्

अब यज्ञवेदी (हवन-कुण्ड) में आम, पीपल, वट, गूलर, पलाश, शमी या बिल्वादि की समिधाओं का चयन करें।

अग्नि-ज्वालन-मन्त्रः

ओं भूर्भुवः स्वः।–[गोभिलगृह्य० १/ १/ ११]

अर्थ-(**ओ३म्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप (**भूः**) प्राणों के प्राण (**भुवः**) सब दुःख दूर करनेवाले तथा (**स्वः**) सब सुख देनेवाले हैं। आपकी कृपा से मेरा यह यज्ञानुष्ठान सफल होवे॥

इस मन्त्र का उच्चारण करके अग्नि अथवा घी का दीपक जलाकर उससे चमचे, आदि किसी पात्र में कपूर रख उसमें अग्नि जलाकर उसमें छोटी-छोटी लकड़ी लगाकर यजमान वा पुरोहित उस पात्र को दोनों हाथों से उठाकर यदि गर्म हो तो चिमटे से पकड़कर अगले मन्त्र से अग्न्याधान (अग्नि की स्थापना) करे–

अग्न्याधान-मन्त्रः

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा।
तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे॥

-[**यजुः०** ३/५]

अर्थ-(ओ३म्) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप **(भूः) सबके** प्राणाधार, सबके उत्पादक **(भुवः)** सब दुःख-विनाशक **(स्वः)** सुखस्वरूप एवं सर्वसुख प्रदाता हैं। आपकी कृपा से मैं **(द्यौः इव)** सूर्यलोक के समान **(भूम्ना)** ज्ञान और ऐश्वर्य से सुशोभित हो जाऊँ तथा **(पृथिवीव)** पृथिवी के समान **(वरिम्णा)** उत्तम-उत्तम गुणों से सुशोभित हो जाऊँ। **(देवयजनि)** विद्वान् लोग जहाँ यज्ञ करते हैं उस **(ते)** आपकी **(तस्याः)** उस **(पृथिवी)** भूमि के **(पृष्ठे)** पृष्ठ के ऊपर **(अन्नादम्)** हव्य-अन्नों का भक्षण करनेवाली **(अग्निम्)** यज्ञीय अग्नि को **(अन्नाद्याय)** भक्षण करने-योग्य अन्न एवं धर्मानुकूल सुख-भोगों के लिए **(आदधे)** यज्ञ-कुण्ड में स्थापित करता हूँ।

इस मन्त्र से वेदी के बीच में अग्नि को धर उस पर छोटे-छोटे काष्ठ और थोड़ा कपूर धर, अगला मन्त्र पढ़के व्यजन से अग्नि को प्रदीप्त करें-

अग्निप्रदीपन-मन्त्रः

ओम् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳ सृजेथामयं च।
अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत॥

-[यजुः० १५/५४]

अर्थ-(ओम्) हे सर्वरक्षक **(अग्ने)** प्रकाशस्वरूप परमेश्वर! **(त्वम्)** तू हमें **(उत्)** उत्तम प्रकार से **(बुध्यस्व)** बोध करा और **(प्रतिजागृहि)** जाग्रत् करा, हम **(इष्टापूर्ते)** अभिलषित शुभ कार्यों को **(सम् सृजेथाम्)** अच्छी प्रकार सम्पन्न करें **(च)** और **(अयम्)** यह यजमान उनसे युक्त होवे, अर्थात् यजमान शुभ कर्मों को सम्पन्न करने में सफल होवे। **(अस्मिन्)** इस **(अधि-उत्तरस्मिन्)** सर्वश्रेष्ठ **(सधस्थे)** उत्तम स्थान=यज्ञशाला में **(विश्वे देवाः)** सब विद्वान् लोग **(च)** और **(यजमानः)** यजमान=यज्ञकर्त्ता जन **(सीदत)** सुख-शान्ति और सम्मानपूर्वक बैठें, अर्थात् यज्ञ में उपस्थित सभी लोग यज्ञशाला में सुशोभित होवें॥

समिदाधान-मन्त्राः

चन्दन अथवा पलाश की आठ-आठ अंगुल लम्बी तीन समिधाएँ घृत में भिगोकर क्रमशः निम्नलिखित मन्त्रों से अग्निकुण्ड में रखें।

इस मन्त्र से पहली समिधा अग्नि में रखें–

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय **चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे-इदन्न मम॥१॥** –[**आ०गृह्य० १/१०/१२**]

अर्थ–(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**जातवेदाः**) सर्वज्ञ, सर्वव्यापक परमेश्वर! (**अयम्**) यह (**आत्मा**) जीवात्मा (**ते**) उस=जीवनरूपी यज्ञ की (**समिधा**) समिधा है। (**तेन**) उस=आत्मा द्वारा हमारे जीवनरूपी यज्ञ में दिव्य ज्ञानाग्नि (**इध्यस्व**) प्रज्ज्वलित होवे (**च**) और (**वर्धस्व**) अच्छी प्रकार बढ़े। हे परमात्मा! आप (**अस्मान्**) हमें (**प्रजया**) उत्तम सन्तानों से, (**पशुभिः**) उत्तम पशु-पक्षियों से (**ब्रह्मवर्चसेन**) ब्रह्मवर्चस, अर्थात् विद्या, ब्रह्मचर्य, अपनी भक्ति के तेज से (**च**) और (**अन्न-अद्येन**) खाने-योग्य अन्न तथा अन्य भोग्य-पदार्थों से (**सम्-एधय**) अच्छी प्रकार समृद्ध कीजिये। (**स्वाहा**) हे ईश्वर! इस प्रार्थना के साथ यह आहुति आपको समर्पित है। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्नये**) दुःख-दोष-विनाशक और (**जातवेदसे**) सर्वव्यापक परमेश्वर! आपके लिए समर्पित है। (**इदं न मम**) यह मेरी नहीं है, अर्थात् यह आहुति आपकी ही दी हुई है, इसमें मेरा कुछ भी नहीं है॥

अब अगले दोनों मन्त्रों से दूसरी समिधा अग्नि में रखें–

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्
आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा॥ इदमग्नये-इदन्न मम॥२॥

–[**यजुः० ३/१**]

अर्थ–(**ओम्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आपकी कृपा से यज्ञ करनेवाले हम लोग (**समिधा**)लकड़ी, घृत आदि से (**अतिथिम्**) अतिथि के समान सत्कारपूर्वक (**अ[illegible]म्**) इस यज्ञाग्नि को (**दुवस्यत**) प्रज्ज्वलित करें और (**घृतै[illegible]** [illegible]हुतियों से (**बोधयत**) बढ़ावें, फिर हम (**अस्मिन्**) इस यज्ञा[illegible]में (**हव्या**) सुगन्धित और रोगनाशक हवन-योग्य पदार्थों से (**आ**) अच्छी प्रकार (**जुहोतन**) हवन करें। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्नये**)

दुर्गुण-विनाशक परमात्मा! आपके लिए समर्पित है। (**इदं न मम**) यह मेरी नहीं है।

ओं सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन।

अग्नये जातवेदसे स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे—इदन्न मम॥३॥

–[यजुः० ३/२]

अर्थ- हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आपकी कृपा से हम लोग (**सु-सम्-इद्धाय**) बहुत अच्छी प्रकार प्रदीप्त करने के लिए (**शोचिषे**) शुद्ध ज्वालाओं से युक्त (**जातवेदसे**) सब पदार्थों में विद्यमान (**अग्नये**) अग्नि में (**तीव्रम्**) तपे हुए, सब दोषों के निवारण में तीव्र प्रभाव करनेवाले (**घृतम्**) घृत, मिष्ट, आदि उत्तम पदार्थों की (**जुहोतन**) अच्छी प्रकार आहुतियाँ देवें। (**इदम**) यह आहुति (**अग्नये**) दुर्गुण-विनाशक प्रकाशस्वरूप (**जातवेदसे**) सर्वज्ञ और सर्वव्यापी परमात्मा! आपके लिए समर्पित है। (**इदं न मम**) यह मेरी नहीं है॥

इस मन्त्र से तीसरी समिधा अग्नि में रखें—

ओं तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि।

बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे—इदन्न मम॥४॥

–[यजुः० ३/३]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आपकी कृपा से हम लोग (**अङ्गिरः**) सब पदार्थों में व्याप्त, (**यविष्ठय**) अति बलवान् (**बृहत्**) बड़े तेज से युक्त (**शोच**) प्रकाश करनेवाली (**तंत्वा**) उस अग्नि को (**समिद्भिः**) काष्ठ की समिधा और (**घृतेन**) घृत से (**वर्द्धयामसि**) बढ़ाते हैं। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्नये**) दुर्गुण-विनाशक, प्रकाशस्वरूप (**अङ्गिरसे**) सर्वव्यापक परमात्मा! आपके लिए समर्पित है। (**इदं न मम**) यह मेरी नहीं है॥

पञ्चघृताहुति-मन्त्रः

औम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्द्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा॥

इदमग्नये जातवेदसे–इदन्न मम॥१॥ –**[आ०गृह्य० १/१०/१२]**

अर्थ–(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**जातवेदा:**) सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, परमेश्वर! (**अयम्**) यह (**आत्मा**) जीवात्मा (**ते**) उस=जीवनरूपी यज्ञ की (**समिधा**) समिधा है। (**तेन**) उस=आत्माहुति द्वारा हमारे जीवनरूपी यज्ञ में दिव्य ज्ञानाग्नि (**इध्यस्व**) प्रज्ज्वलित होवे (**च**) और (**वर्धस्व**) अच्छी प्रकार बढ़े। हे परमात्मा! आप (**अस्मान्**) हमें (**प्रजया**) उत्तम सन्तानों से, (**पशुभि:**) उत्तम पशु-पक्षियों से (**ब्रह्मवर्चसेन**) ब्रह्मवर्चस्, अर्थात् विद्या, ब्रह्मचर्य, अपनी भक्ति के तेज से (**च**) और (**अन्न-अद्येन**) खाने-योग्य अन्न तथा अन्य भोग्य-पदार्थों से (**सम्-एधय**) अच्छी प्रकार समृद्ध कीजिये। (**स्वाहा**) हे ईश्वर! इस प्रार्थना के साथ यह आहुति आपको समर्पित है। (**इदम्**) यह आहति (**अग्नये**) दु:ख-दोष-विनाशक और (**जातवेदसे**) सर्वव्यापक परमेश्वर! आपके लिए समर्पित है। (**इदं न मम**) यह आहुति मेरी नहीं है, अर्थात् यह आहुति आपकी ही दी हुई है, इसमें मेरा कुछ भी नहीं है।

जल-प्रसेचन-मन्त्रा:

अब अञ्जलि में जल लेकर पूर्वादि चारों दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों को बोल-बोलकर जल छिड़कें–

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व ॥१॥ इस मन्त्र से पूर्व में,

ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व ॥२॥ इस मन्त्र से पश्चिम में,

ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व ॥३॥ इस मन्त्र से उत्तर में।

–**[गोभि० गृह्य० १/३/१-३]**

अर्थ- हे (**अदिते**) अखण्ड ईश्वर! (**अनुमन्यस्व**) आप हमें यज्ञानुकूल मति दीजिये॥१॥

हे (**अनुमते**) यज्ञानुकूल मति के दाता ईश्वर! (**अनुमन्यस्व**) आप हमें यज्ञानुकूल मति दीजिये॥२॥

हे (**सरस्वती**) ज्ञानस्वरूप प्रभो! (**अनुमन्यस्व**) आप हमें यज्ञानुकूल मति दीजिये॥३॥

ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय।
दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु॥४॥

-[यजुः० ३०/१]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**देव**) दिव्य गुण-शक्ति-सम्पन्न, सर्वप्रकाशक (**सवितः**) समस्त ऐश्वर्य से युक्त और सब जगत् को उत्पन्न करनेवाले जगदीश्वर! (**भगाय**) धन-ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए (**यज्ञं**) यज्ञ को (**प्रसुव**) बढ़ाइये=सफल कीजिये और (**यज्ञपतिम्**) यज्ञ के स्वामी=यज्ञकर्त्ता को (**प्रसुव**) बढ़ाइये, उन्नत और सफल कीजिये। हे ईश्वर! आप (**दिव्यः**) शुद्धस्वरूप, (**गन्धर्वः**) वेद-वाणी, यज्ञ और पृथिवी को धारण करनेवाले हैं। आप (**केतपूः**) ज्ञान-विज्ञान द्वारा (**नः**) हमारे (**केतम्**) मन-बुद्धि को (**पुनातु**) पवित्र कीजिये। आप (**वाचस्पतिः**) वाणी के स्वामी=रक्षक हैं। आप (**नः**) हमारी (**वाचम्**) वाणी को (**स्वदतु**) मीठी, कोमल, प्रिय और पवित्र कीजिये॥४॥

आघारवाज्यभागाहुति-मन्त्राः

''यज्ञ-कुण्ड के उत्तर भाग में जो एक आहुति और यज्ञ-कुण्ड के दक्षिण में दूसरी आहुति देनी होती है, उनको '**आघारवाज्याहुति**' कहते हैं और यज्ञ-कुण्ड के मध्य में जो दो आहुतियाँ दी जाती हैं, उनको '**आज्यभागाहुति**' कहते हैं। सो घृतपात्र में से स्रुवा को भरकर अँगूठा, मध्यमा, अनामिका से स्रुवा को पकड़कर''—

निम्नलिखित मन्त्र से वेदी के उत्तर भाग अग्नि में आहुति देवें—

ओम् अग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥१॥

निम्नलिखित मन्त्र से वेदी के दक्षिण भाग अग्नि में आहुति देवें—

ओं सोमाय स्वाहा॥ इदं सोमाय—इदन्न मम॥२॥

गोभिल० १/खं० ८/२४]

अब निम्नलिखित दोनों मन्त्रों से वेदी के मध्य में आहुति देवें–

ओं प्रजापतये स्वाहा॥ इदं प्रजापतये इदन्न मम॥३॥

–[कात्या० श्रौ०/३/१२]

ओं इन्द्राय स्वाहा॥ इदं इन्द्राय इदन्न मम॥४॥

–[कात्या० श्रौ०/३/ १९]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**अग्नये**) प्रकाशस्वरूप परमात्मा! आपके लिए (**स्वाहा**) यह आहुति है। (**इदम**) यह आहुति (**अग्नये**) अग्निस्वरूप परमात्मा आपके लिए ही है, (**इदम् न मम**) यह मेरी नहीं है॥१॥

(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**सोमाय**) सुख-शान्ति के भण्डार परमात्मा! आपके लिए (**स्वाहा**) यह आहुति है। (**इदम्**) यह आहुति (**सोमाय**) सुख-शान्ति के भण्डार परमात्मा आपके लिए ही है। (**इदं न मम**) यह आहुति मेरे लिए नहीं है। (**इदम**) यह आहुति (**सोमाय**) सुख-शान्ति के भण्डार परमात्मा आपके लिए ही है। (**इदं न मम**) यह आहुति मेरे लिए नहीं है॥२॥

(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**प्रजापतये**) प्रजापालक परमेश्वर! आपके लिए (**स्वाहा**) यह आहुति है। (**इदम्**) यह आहुति (**प्रजापतये**) सब प्रजा के स्वामी परमात्मा आप के लिए ही है। (**इदं न मम**) यह आहुति मेरे लिए नहीं है॥३॥

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**इन्द्राय**) परमैश्वर्यवान् परमेश्वर! आपके लिए (**स्वाहा**) यह आहुति है। (**इदम्**) यह आहुति (**इन्द्राय**) परमैश्वर्यवान् परमात्मा आपके लिए ही है। (**इदं न मम**) यह आहुति मेरे लिए नहीं है॥४॥

व्याहृत्याहुति-मन्त्राः

(घी की चार आहुतियाँ)

ओं भूरग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये–इदन्न मम॥१॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा॥ इदं वायवे–इदन्न मम॥२॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा॥ इदमादित्याय–इदन्न मम॥३॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा॥

इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः–इदन्न मम॥४॥

–[गोभिल गृह्यसूत्र, १/ ८/ १५]

अर्थ–(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**भूः**) प्राणों के प्राण–सब जगत् के उत्पादक (**अग्नये**) अग्निस्वरूप, सर्वव्यापक परमेश्वर! आपके लिए (**स्वाहा**) यह आहुति है। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्नये**) अग्निस्वरूप परमात्मा आप के लिए ही है (**इदं न मम**) यह आहुति मेरे लिए नहीं है॥**१**॥

(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**भुवः**) सर्व दुःख-विनाशक (**वायवे**) सर्वव्यापी परमेश्वर! आपके लिए (**स्वाहा**) यह आहुति है। (**इदम्**) यह आहुति (**वायवे**) सर्वव्यापी परमात्मा के लिए ही है (**इदं न मम**) यह आहुति मेरे लिए नहीं है॥२॥

(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**स्वः**) सब सुखों के दाता (**आदित्याय**) अखण्ड प्रकाश के स्वामी परमेश्वर! आपके लिए (**स्वाहा**) यह आहुति है। (**इदम्**) यह आहुति (**आदित्याय**) जग के प्रकाशक परमात्मा आपके लिए ही है, (**इदं न मम**) यह आहुति मेरे लिए नहीं है॥**३**॥

(**ओम्**) हे सर्वरक्षक, (**भूः**) सब जगत् के प्राण, (**भुवः**) सर्व दुःख-विनाशक (**स्वः**) सब सुखों के दाता (**अग्निः**) स्वप्रकाशस्वरूप (**वायु**) सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् (**आदित्येभ्यः**) सब जगत् के सूर्य परमात्मा! आपके लिए (**स्वामी**) यह आहुति है। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्नि**) स्वप्रकाशस्वरूप (**वायु**) सर्वशक्तिमान् (**आदित्येभ्यः**) सब जगत् के प्रकाशक परमात्मा आपके लिए ही समर्पित है। (**इदं न मम**) यह मेरे स्वार्थ के लिए नहीं है॥४॥

स्विष्टकृत्-होमाहुति-मन्त्रः

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्।

अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे।
अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां
कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा।।
इदमग्नये स्विष्टकृते-इदन्न मम।।–[आश्व० १/१०/२२]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! (**अस्य**) इस (**कर्मणः**) यज्ञ-कर्म के अनुष्ठान में (**यत्**) जो (**अति अरीरिचम्**) अधिक किया है (**वा**) अथवा (**इह**) इस कर्म में (**यत्**) जो (**न्यूनम्**) थोड़ा (**अकरम्**) किया है। (**तत्**) उस (**सर्वम्**) सबको, (**अग्निः**) हे दोषनिवारक, ज्ञानप्रकाशस्वरूप परमात्मा! आप (**तत्**) उस (**सर्वम्**) सब (**स्विष्टकृत्**) यज्ञकर्म=शुभकर्म व शुभ इच्छा को (**विद्यात्**) जानते हैं। आप (**मे**) मेरे (**स्विष्टम्**) उस शुभकर्म, शुभकामनाओं को (**सुहुतम्**) अच्छी प्रकार (**करोतु**) पूर्ण करें, अर्थात् मुझे सफल बनाएँ। (**अग्नये**) हे ज्ञानप्रकाशस्वरूप परमेश्वर! आपकी आज्ञापालन के लिए (**स्विष्टकृते**) यज्ञकर्म=शुभ कर्म को पूर्ण करने वाले आपके लिए, (**सुहुतहुते**) अच्छी प्रकार किये गए यज्ञों को सफल करने वाले तथा उनका सुफल देनेवाले आपके लिए, (**सर्व प्रायश्चित्त+आहुतीनाम्**) सब प्रायश्चित-आहुतियों, अर्थात् यज्ञकर्म में हुई त्रुटियों के प्रायश्चित के लिए (**कामानाम्**) समस्त मनोकामनाओं को (**समर्द्धयित्रे**) पूर्ण करनेवाले आपके लिए (**स्वाहा**) यह आहुति दे रहा हूँ। हे परमात्मा! आप (**नः**) हमारी (**सर्वान्**) सब (**कामान्**) शुभ मनोकामनाओं को (**समर्द्धय**) पूर्ण कीजिये। (**इदम्**) यह आहुति (**स्विष्टकृते**) शुभ मनोकामनाओं को पूर्ण करनेवाले (**अग्नये**) परमेश्वर! आपके लिए समर्पित है। (**इदं न मम**) यह मेरी नहीं है।

प्राजापत्याहुति-मन्त्रः

(यह मन्त्र मन में बोलकर ही आहुति देवें, अर्थात् केवल **'ओ३म्, ...स्वाहा'** ही बोलें। मध्यभाग 'प्रजापतये' को मन में ही विचारें।)

ओं प्रजापतये स्वाहा।। इदं प्रजापतये–इदन्न मम।।

–[पार०, गृह्य० १/९/३]

अर्थ- (**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**प्रजापतये**) प्रजापालक परमेश्वर! आपके लिए (**स्वाहा**) यह आहुति है। (**इदम्**) यह आहुति (**प्रजापतये**) सब प्रजा के स्वामी परमात्मा! आपके लिए ही है। (**इदम् न मम**) यह आहुति मेरे लिए नहीं है।

आज्याहुति-मन्त्राः

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः।
आरेबाधस्व दुच्छुनां स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय-इदन्न मम॥१॥

-[ऋ० ९/६६/१९]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप (**भूः**) प्राणों के प्राण=सबके प्राणदाता (**भुवः**) दुःख-विनाशक और (**स्वः**) सुखस्वरूप, सब सुखों के दाता हैं। (**अग्ने**) हे दुर्गुण-विनाशक, स्व-ज्ञान प्रकाशस्वरूप परमात्मा! आप (**आयूंषि**) हमारी आयु=हमारे जीवन को (**पवसे**) पवित्र एवं रक्षित करनेवाले हैं, अतः आप हमारे जीवन को पवित्र एवं उसकी रक्षा कीजिये, (**नः**) हमारे लिए (**ऊर्जम्**) ऊर्जा, बल, पराक्रम (**च**) और (**इषम्**) अन्नादि ऐश्वर्य को (**आ सुख**) प्राप्त कराइये। हे ईश्वर! आप (**दुच्छुनाम्**) विघ्नकारी दुष्ट जीवों, दुर्विचारों, दुर्गुणों, दुःखों को हमसे (**आरे**) दूर (**वाध स्व**) कर दीजिये, (**स्वाहा**) मेरा यह कथन सत्य होवे। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्नये**) दुर्गुण-विनाशक और (**पवमानाय**) सर्वस्व पवित्र करनेवाले परमात्मा! आपके लिए ही है, अर्थात् आपको समर्पित है। (**इदं न मम**) यह मेरे लिए नहीं है॥१॥

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः॥
तमीमहे महागयं स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय-इदन्न मम॥२॥

-[ऋ० ९/६६/२०]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप (**भूः**) प्राणों के प्राण=सबके प्राणाधार (**भुवः**) दुःखविनाशक और (**स्वः**) सुखस्वरूप तथा सब सुखों के दाता हैं। (**अग्ने**) हे दुर्गुण-विनाशक ज्ञान-प्रकाशस्वरूप परमात्मा! आप

(**ऋषिः**) सबके सूक्ष्म द्रष्टा और सर्वव्यापक, (**पवमानः**) पवित्र करनेवाले, (**पाञ्चजन्यः**) पाँचों इन्द्रियों को शुभकर्मों में लगानेवाले अथवा पञ्चमहाभूतों–पृथिवी, अग्नि, जल, वायु और आकाश को अपने नियम में रखनेवाले (**पुरोहितः**) समस्त संसार का हित करनेवाले अथवा मनुष्यों द्वारा एकमात्र उपासनीय हैं। (**महागयम्**) महान् ऐश्वर्य देनेवाले (**तम्**) उस आपको हम (**ईमहे**) प्राप्त होते हैं, अर्थात् आपकी भक्ति-उपासना करते हैं। (**स्वाहा**) मेरा यह कथन सत्य होवे। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्नये**) दुर्गुण-विनाशक और (**पवमानाय**) सर्वस्व पवित्र करनेवाले परमात्मा! आपके लिए ही है, (**इदं न मम**) यह मेरे लिए नहीं है॥२॥

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चःसुवीर्यम्
दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय–इदन्न मम॥३॥

-[ऋ० ९/६६/२१]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप (**भूः**) सबके प्राणदाता (**भुवः**) सब दुःख-विनाशक और (**स्वः**) सुखस्वरूप एवं सब सुखों के दाता हैं। (**अग्ने**) हे दुर्गुण-विनाशक परमात्मा! आप (**स्वपाः**) शुभकर्मवाले हमें (**पवस्व**) पवित्र कीजिये तथा (**अस्मे**)हममें (**वर्चः**) ब्रह्मतेज और (**सुवीर्यम्**) सुन्दर बल, पराक्रम को धारण कराइये। (**मयि**) मेरे जीवन में (**रयिम्**) धन-ऐश्वर्य को (**पोषम्**) शरीर के अङ्गों की पुष्टि को (**दधत्**) धारण कराइये। (**स्वाहा**) मेरा यह कथन सत्य होवे। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्नये**) दुर्गुण-विनाशक और (**पवमानाय**) सब-कुछ पवित्र करनेवाले परमात्मा! आपके लिए ही है। (**इदं न मम**) यह मेरे लिए नहीं है॥३॥

ओं भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा॥
इदं प्रजापतये–इदन्न मम॥४॥ -[ऋ० १०/१२१/१०]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप (**भूः**) प्राणों के प्राण (**भुवः**) सब दुःख-विनाशक और (**स्वः**) सुखस्वरूप, सब सुखों के दाता हैं। (**प्रजापते**) हे सब प्रजा के स्वामी परमात्मा! (**त्वत्**) आप से (**अन्यः**)

भिन्न दूसरा कोई (**ता**) उन (**एतानि**) इन (**विश्वा**) सब (**जातानि**) उत्पन्न हुए जड़-चेतनादि को (**परि बभूव**) उत्पन्न, धारण और संहार करने में समर्थ (**न**) नहीं है, अर्थात् आप सर्वोपरि हैं। (**यत्कामाः**) जिस-जिस पदार्थ की शुभकामनावाले हम लोग (**ते**) आपका (**जुहमः**) आश्रय लेते हैं, आपकी भक्ति-उपासना करते हुए (**स्वाहा**) आपको यह आहुति प्रदान करते हैं। आपकी कृपा से (**नः**) हमारी (**तत्**) वे कामनाएँ (**अस्तु**) सिद्ध=पूर्ण होवें, जिससे हम लोग (**रयीणाम्**) धन-ऐश्वर्यों के (**पतयः**) स्वामी (**स्याम**) होवें। (**इदम्**) यह आहुति (**प्रजापतये**) हे सब प्रजा के पालक! आपके लिए समर्पित है। (**इदं न मम**) यह मेरे लिए नहीं है॥४॥

अष्टाज्याहुति-मन्त्राः

(सभी मङ्गलकार्यों में ये आठ आहुतियाँ देवें)

ओं त्वं नोऽअग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेळोऽव यासिसीष्ठाः।
यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा॥
इदमग्नीवरुणाभ्याम्-इदन्न मम॥१॥ -[ऋ० ४/१/४]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**अग्ने**) प्रकाशस्वरूप परमात्मा! (**त्वम्**) आप (**नः**) हमारे सब कार्यों को (**विद्वान्**) जाननेवाले हैं, अतः (**वरुणस्य**) श्रेष्ठ तथा (**देवस्य**) विद्वानों के प्रति हमारे जो (**हेळः**) अनादर के भाव हैं, आप उन्हें (**अव यासिसीष्ठाः**) हम से दूर कर दीजिये। हम (**शोशुचानः**) अत्यन्त तेजस्वी बनें। आप (**अस्मत्**) हमसे (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**द्वेषांसि**) द्वेषयुक्त कर्मों को (**प्र मुमुग्धि**) दूर कर दीजिये। (**स्वाहा**) मेरा यह वचन सत्य हो, अर्थात् यह मेरी प्रार्थना है। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्निः**) दुर्गुण बिनाशक (**वरुणाभ्याम्**) विद्वानों के विद्वान् और वरणीय परमात्मा! आपके लिए है। (**इमं न मम**) यह आहुति मेरी नहीं है, अर्थात इस आहुति में सब-कुछ आपका दिया हुआ ही है, मेरा कुछ भी नहीं है॥१॥

ओं स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठोऽअस्या उषसो व्युष्टौ।
अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा॥

इदमग्नीवरुणाभ्याम्–इदन्न मम ॥२॥ –[ऋ० ४/१/५]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**अग्ने**) प्रकाशस्वरूप परमेश्वर! (**सः**) वह (**त्वम्**) आप (**अस्याः**) इस (**उषसः**) प्रातःकाल के (**व्युष्टौ**) विशेष हवन में हमारे (**नेदिष्ठः**) अत्यन्त समीप स्थित होकर (**ऊती**) अपने रक्षादि कर्म द्वारा (**नः**) हम लोगों के (**अवमः**) रक्षक (**भव**) होइये। हे ईश्वर! आप (**वरुणम्**) श्रेष्ठ उपदेश=ज्ञान को (**रराणः**) देते हुए (**नः**) हम लोगों को (**अव, यक्ष्व**) प्राप्त होइये और (**सुहवः**) उत्तम प्रकार से बुलानेवाले (**नः**) हम लोगों के लिए (**मृळीकम्**) सुख को (**वीहि**) प्राप्त करानेवाले (**एधि**) होइये। (**स्वाहा**) मेरा यह वचन सत्य होवे। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्निः**) दुर्गुण-विनाशक (**वरुणाभ्याम्**) विद्वानों के विद्वान् और वरणीय परमात्मा! आपके लिए है। (**इदं न मम**) यह मेरे लिए नहीं है॥२॥

ओम् इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय।
त्वामवस्युरा चके स्वाहा॥ इदं वरुणाय–इदन्न मम॥३॥

–[ऋ० १/२५/१९]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**वरुणा**) सर्वव्यापक, सर्वोत्तम परमेश्वर! (**अद्य**) आज (**अवस्युः**) अपनी रक्षा के लिए मैं (**त्वाम्**) आपको (**आ चके**) अच्छी प्रकार पुकारता हूँ। आप (**मे**) मेरी (**इमम्**) इस (**हवम्**) अच्छी प्रकार की गई स्तुति, प्रशंसा वा प्रार्थना को (**श्रुधि**) सुनिये (**च**) और (**मृळय**) मुझे सुखी कीजिये, (**स्वाहा**) मेरी यह प्रार्थना सत्य है। (**इदम्**) यह आहुति (**वरुणाय**) सर्वव्यापक परमेश्वर! आपके लिए है, (**इदं न मम**) यह मेरे लिए नहीं है॥३॥

ओं तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः।
अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्र मोषीः स्वाहा॥
इदं वरुणाय-इदन्न मम॥४॥ –[ऋ० १/२४/११]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**उरुशंस**) सर्वदा प्रशंसनीय (**वरुण**) वरणीय जगदीश्वर! (**तत् त्वा**) जिस=आपका आश्रय लेकर (**यजमानः**)

यज्ञानुष्ठान करनेवाला मैं (**हविर्भिः**) हवन की आहुतियों द्वारा (**तत्**) उस=अत्यन्त सुख की (**आशास्ते**) आशा करता हूँ। मैं (**ब्रह्मणा**) वेद-मन्त्रों द्वारा (**वन्दमानः**) स्तुति, उपासना करता हुआ तथा (**अहेळमानः**) आपका अनादर न करता हुआ (**याभि**) आपको प्राप्त होता हूँ, अर्थात् मैं आपकी शरण में हूँ। आप कृपा करके मुझे (**इह**) इस संसार में (**बोधि**) बोधयुक्त, अर्थात् मझे सत्-असत् का विवेक प्रदान कीजिये और (**नः**) हमारी (**आयुः**) आयु (**मा, प्रमोषीः**) व्यर्थ न जाने दें, अर्थात् मेरे आत्मा को अतिशीघ्र प्रकाशित कीजिये। (**स्वाहा**) मेरा यह कथन सत्य है। (**इदम्**) यह आहुति (**वरुणाय**) वरणीय परमेश्वर! आपके लिए है, (**इदं न मम**) यह मेरी नहीं है।।4।।

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्त्रं यज्ञिया पाशा वितता महान्तः।
तेभिर्नोऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा ।।
इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः-
इदन्न मम।।५।। -[**कात्या० श्रौत० २५/१/११**]

अर्थ-(ओम्) हे सर्वरक्षक (**वरुण**) स्वीकरणीय परमेश्वर! (**ये**) जो (**ते**) वे (**शतम्**) सैकड़ों और (**ये**) जो (**सहस्त्रम्**) हजारों (**यज्ञियाः**) यज्ञ-सम्बन्धी=यज्ञ-उपासना और शुभकर्म में आनेवाली (**महान्तः**) बड़ी (**पाशाः**) बाधाएँ (**वितताः**) फैली हुई हैं=आती रहती हैं, (**सविता**) हे सकल जगदुत्पादक (**विष्णुः**) सर्वव्यापक (**विश्वे**) सब भाँति (**स्वर्क्काः**) पूजनीय (**उत**) और (**मरुतः**) सर्वशक्तिमान् परमात्मा! आप (**तेभिः**) उन बाधाओं से (**मरुतः**) सर्वशक्तिमान् परमात्मा! आप (**तेभिः**) उन बाधाओं से (**नः**) हमें (**मुञ्चन्तु**) मुक्त करें (**स्वाहा**) मेरी यह प्रार्थना सत्य है। (**इदम्**) यह आहुति (**वरुणाय**) स्वीकरणीय (**सवित्रे**) सर्वोत्पादक (**विष्णवे**) सर्वव्यापक (**विश्वेभ्यो देवेभ्यः**) सम्पूर्ण दिव्य-शक्ति से युक्त, (**मरुद्भ्यः**) सर्वशक्तिमान् (**स्वर्केभ्यः**) तेजस्वी, पूजनीय परमात्मा! आपके लिए है। (**इदं न मम**) इस आहुति मेरी नहीं है, अर्थात् इस आहुति आपकी ही है।।५।।

ओम् अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमया असि।

अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजंॅ स्वाहा॥

इदमग्नये अयसे-इदन्न मम॥६॥ -[कात्यायन श्रौत० २५/१/११]

अर्थ-(ओम्) हे सर्वरक्षक **(अग्ने)** प्रकाशस्वरूप परमेश्वर! आप **(अयाः)** सर्वव्यापक **(च)** और **(अनभिशस्तिपाः)** निर्दोष प्राणियों के रक्षक **(असि)** हैं **(च)** और **(त्वम्)** आप **(अयाः)** कल्याणकारी **(असि)** हैं, **(सत्यम् इत्)** यह सत्य ही है। हे **(अयाः)** सर्वव्यापक, कल्याणकारी ईश्वर! आप **(नः)** हमारे **(यज्ञं)** यज्ञ को **(वहासि)** सर्वत्र वहन करते हैं, अर्थात् सदैव लक्ष्य तक पहुँचाकर पूर्ण करते हैं, **(अयाः)** हे सर्वव्यापी जगदीश्वर! आप **(नः)** हमारे लिए **(भेषजं)** दुःख एवं रोगनिवारक पदार्थ वा सुखों को **(धेहि)** धारण कराइये, अर्थात् प्रदान कीजिये। **(स्वाहा)** मेरा यह शुभ कथन सत्य होवे। **(इदम्)** यह आहुति **(अग्नये)** दुर्गुण-निवारक और **(अयसे)** सर्वव्यापक परमेश्वर! आपके लिए है। **(इदं न मम)** यह आहुति मेरी नहीं है॥६॥

ओं उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय।

अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा॥

इदं वरुणायऽऽदित्यायाऽदितये च–इदन्न मम॥७॥

-[ऋ० १/२४/१५]

अर्थ-(ओम्) हे सर्वरक्षक **(वरुण)** स्वीकार करने-योग्य परमेश्वर! आप **(अस्मत्)** हमसे **(उत्तमम्)** अर्थात् अति दृढ़, अत्यन्त दुःख देने वाले, **(मध्यमम्)** मध्यम, अर्थात् निकृष्ट से कुछ विशेष **(उत्)** और **(अधमम्)** निकृष्ट कोटि के **(पाशम्)** सांसारिक बन्धनों, अर्थात् दुःख-भोग में फँसानेवाले दुर्गुणों, दुष्कर्मों, दुर्विचारों और दुर्जनों को **(वि अव श्रथाय)** अच्छी प्रकार नष्ट कीजिये। **(अथ)** इसके बाद **(आदित्य)** हे विनाशरहित जगदीश्वर! हम लोग **(तव)** आपके द्वारा विहित **(व्रते)** सत्याचरण-रूपी व्रत को करके **(अनागसः)** निरपराधी, अर्थात् पाप-कर्मरहित, शुद्ध-पवित्र जीवनवाले होकर, **(अदितये)** अखण्ड सुख के लिए **(स्याम)** नियत होवें, अर्थात् प्रयत्नशील रहें, **(स्वाहा)** मेरा यह वचन सत्य होवे, मैं इसी कामना से यह

आहुति दे रहा हूँ। **(इदम्)** यह आहुति **(वरुणाय)** वरणीय, **(आदित्याय)** विनाशरहित **(च)** और **(अदितये)** मुक्ति प्रदाता परमेश्वर! आपके लिए है, अर्थात् आपको ही समर्पित है। **(इदं न मम)** यह आहुति मेरी नहीं है।।७।।

ओं भवतन्नः समनसौ सचेतसावरेपसौ। मा यज्ञꣳ हिꣳसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा।।

इदं जातवेदोभ्याम्–इदन्न मम् ।।८।। –**[यजुः० ५/३]**

अर्थ-(ओम्) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आपकी कृपा से याज्ञिक स्त्री-पुरुष **(नः)** हमारे, अर्थात् सब मनुष्यों के लिए **(समनसौ)** विज्ञानयुक्त समान मनवाले, **(सचेतसौ)** ज्ञान-ज्ञापनयुक्त=समान बुद्धिवाले **(अरेपसौ)** पापरहित **(जातवेदसौ)** वेद और उपविद्याओं को पढ़ने-पढ़ानेवाले विद्वान् और उपदेश करने वाले **(भवतम्)** होवें। वे **(यज्ञम्)** यज्ञ, अर्थात् शुभकर्मों को और **(यज्ञपतिम्)** यज्ञानुष्ठान करनेवाले को **(मा हिंसिष्टम्)** हानि न पहुँचाएँ। वे **(अद्य)** आज, अर्थात् सदैव **(नः)** हम लोगों के लिए **(शिवौ)** मङ्गल करनेवाले **(भवतम्)** होवें **(स्वाहा)** इसी भावना से यह आहुति, अर्पित करता हूँ। **(इदम्)** यह आहुति **(जातवेदोभ्याम्)** वेदों के विद्वान् स्त्री-पुरुष के कल्याण के लिए अर्पित है। **(इदं न मम)** यह मेरी नहीं है।।८।

प्रातःकालीन अग्निहोत्र-मन्त्राः

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।।१।। –**[यजुः० ३/९]**

अर्थ-(ओम्) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप **(सूर्यः)** चराचर जगत् के आत्मा **(ज्योतिः)** प्रकाशस्वरूप **(ज्योतिः)** सूर्य आदि प्रकाशित लोकों के भी **(सूर्यः)** प्रकाशक हैं। **(स्वाहा)** आपके लिए यह आहुति समर्पित है, अर्थात् संसार के उपकारार्थ यह आहुति देते हैं।।१।।

ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा।।२।। –**[यजुः० ३/९]**

अर्थ-(ओम्) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप **(सूर्यः)** चराचर जगत् के आत्मा, **(वर्चः)** सब सद्विद्याओं को देनेवाले **(ज्योतिः)** प्रकाशस्वरूप

(**वर्चः**) सर्वोत्तम, वेद-विद्या के प्रकाशक हैं। (**स्वाहा**) यह आहुति आपकी दया-प्राप्ति के लिए, अपको समर्पित है॥२॥

ओं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥३॥ -[यजुः० ३/९]

अर्थ-(ओम्) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप (**ज्योतिः**) स्वप्रकाशमान (**सूर्यः**) सब जगत् को प्रकाशित करनेवाले (**सूर्यः**) सकल संसार के स्वामी तथा (**ज्योतिः**) ज्ञान-प्रकाश और ऐश्वर्य देनेवाले हैं। (**स्वाहा**) यह आहुति आपके लिए समर्पित है॥३॥

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या।
जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा॥४॥ -[यजुः० ३/१०]

अर्थ-(ओम्) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप (**सजूः**) सर्वव्यापी, (**देवेन**) सर्वोत्पादक (**सवित्रा**) सब जगत् के प्रकाशक, (**सजूः**) सबसे प्रीति रखनेवाले, अर्थात् दयालु (**इन्द्रवत्या उषसा**) सूर्य के प्रकाश वाली प्राणदायी उषाकाल के साथ (**जुषाण**) स्तुति करने-योग्य (**सूर्यः**) चराचर जगत् के आत्मा हैं। (**वेतु**) आप हमें प्राप्त होइये। (**स्वाहा**) यह आहुति आपके लिए समर्पित है॥४॥

सायंकालीन अग्निहोत्र-मन्त्राः

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा॥१॥ -[यजुः० ३/९]

अर्थ-(ओम्) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप (**अग्निः**) दुर्गुण-विनाशक (**ज्योतिः**) ज्योतिस्वरूप, (**ज्योतिः**) सूर्यादि प्रकाशक लोकों को भी प्रकाशित करनेवाले, (**अग्निः**) ज्ञानप्रदाता हैं। (**स्वाहा**) यह आहुति आपको समर्पित है। आपकी कृपा से सम्पूर्ण संसार सुखी होके पुरुषार्थी होवे॥१॥

ओम् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥२॥ -[यजुः० ३/९]

अर्थ-(ओम्) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप (**अग्निः**) दुगुर्ण-विनाशक (**वर्चः**) सब विद्याओं को देनेवाले (**ज्योतिः**) प्रकाशस्वरूप (**वर्चः**) सबसे महान्, वेद-विद्या के प्रकाशक हैं। (**स्वाहा**) यह आहुति आपके लिए समर्पित है॥२॥

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा॥३॥ -[यजुः० ३/९]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप (**अग्निः**) दुर्गुण-विनाशक, (**ज्योतिः**) ज्योतिस्वरूप, (**ज्योतिः**) सूर्यादि प्रकाशकों को भी प्रकाशित करनेवाले, (**अग्निः**) ज्ञानप्रदाता हैं। (**स्वाहा**) यह आहुति आपको समर्पित है।।३।।

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या।
जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा।।४।। -[यजुः० ३/१०]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक परमेश्वर! आप (**सजूः**) सर्वव्यापी (**देवेन**) सर्वोत्पादक (**सवित्रा**) सब जगत् के प्रकाशक (**सजूः**) सबसे प्रीति करनेवाले, अर्थात् दयालु (**इन्द्रवत्या**) चन्द्रमा-तारों के प्रकाशवाली (**रात्र्या**) रात्रि के साथ (**जुषाणः**) सर्वव्यापी, स्तुति करने-योग्य और (**अग्निः**) सर्वप्रकाशक हैं (**वेतु**) आप हमें प्राप्त होइये। (**स्वाहा**) यह आहुति आपको समर्पित है।।४।।

प्रातः सायंकालीन आहुति-मन्त्राः

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा ।। इदमग्नये प्राणाय-इदन्न मम।।१।।
ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा ।। इदं वायवेऽपानाय-इदन्न मम।।२।।
ओंस्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा ।। इदमादित्याय व्यानाय-इदन्न मम।।३।।
ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा।।
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः – इदन्न मम।।४।।

-[तै०उ० शिक्षा० ५; तै०आ० १०/२]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**भूः**) प्राणों के प्राण, सम्पूर्ण संसार को उत्पन्न करनेवाले, (**अग्नये**) ज्ञानस्वरूप परमेश्वर (**प्राणाय**) सब जगत् के प्राण, (**स्वाहा**) यह आहुति आपके लिए समर्पित है। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्नये**) हे ज्ञानस्वरूप (**प्राणाय**) सबके प्राण परमात्मा! आपके लिए ही है। (**इदं न मम**) यह मेरे लिए नहीं है।।२।।

(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**स्वः**) सुखस्वरूप, सब सुखों के दाता (**आदित्याय**) अखण्ड, अविनाशी (**व्यानाय**) सम्पूर्ण संसार के सञ्चालक परमेश्वर! (**स्वाहा**) यह आहुति आपके लिए समर्पित है। (**इदम्**) यह

आहुति (**आदित्याय**) हे अविनाशी, (**व्यानाय**) सब जगत् के स्वामी परमात्मा! आपके लिए ही है। (**इदं न मम**) यह मेरे लिए नहीं है।।२।।

(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**स्वः**) सुखस्वरूप, सब सुखों के दाता (**आदित्याय**) अखण्ड, अविनाशी (**व्यानाय**) सम्पूर्ण संसार के सञ्चालक परमेश्वर! (**स्वाहा**) यह आहुति आपके लिए समर्पित है। (**इदम्**) यह आहुति (**आदित्याय**) हे अविनाशी, (**व्यानाय**) सब जगत् के स्वामी परमात्मा! आपके लिए ही है। (**इदं न मम**) यह मेरे लिए नहीं है।।३।।

(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**भूः**) प्राणों के प्राण, सम्पूर्ण संसार को उत्पन्न करनेवाले (**भुवः**) सब दुःखों को दूर करनेवाले, (**स्वः**) सुखस्वरूप, सब सुखों के दाता (**अग्निः**) प्रकाशस्वरूप (**वायुः**) सर्वव्यापक (**आदित्येभ्यः**) अखण्ड, अविनाशी (**प्राण**) सबके प्राणाधार (**अपान**) दोष-निवारक (**व्यानेभ्यः**) सर्वव्यापक, सम्पूर्ण संसार के स्वामी परमेश्वर! आपके लिए (**स्वाहा**) यह आहुति समर्पित है। (**इदम्**) यह आहुति (**अग्निः**) हे प्रकाशस्वरूप, (**वायुः**) सर्वव्यापक, (**आदित्येभ्यः**) अखण्ड-अविनाशी, (**प्राण**) सबके प्राणधार (**अपान**) दोष-निवारक (**व्यानेभ्यः**) सर्वव्यापक, सम्पूर्ण संसार के स्वामी परमात्मा! आपके लिए ही है। (**इदं न मम**) यह आहुति मेरे लिए नहीं है।।४।।

ओं आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा।।५।।

-[**तै० आ०, १०/१५**]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक, (**आपः**) सर्वव्यापक, (**ज्योतिः**) प्रकाशस्वरूप, (**रसः**) आनन्दस्वरूप (**अमृतम्**) अविनाशी, मोक्षस्वरूप (**ब्रह्म**) सबसे महान् (**भूः**) प्राणों के प्राण, (**भुवः**) सब दुःखों को दूर करनेवाले और (**स्वः**) सुखस्वरूप, सब सुखों के दाता, (**ओम्**) सबके रक्षक, सर्वोत्तम परमेश्वर! (**स्वाहा**) यह आहुति आपको समर्पित है।।५।।

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।

तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।।६।।

-[**यजुः० ३२/१४**]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**अग्ने**) ज्ञान-प्रकाशस्वरूप तथा विज्ञान

के प्रकाशक परमेश्वर! (**याम्**) जिस (**मेधाम्**) मेधा-बुद्धि को (**देवगणाः**) अनेक विद्वान् (**च**) और (**पितरः**) पालन और रक्षा करनेवाले माता-पिता, आदि ज्ञानी लोग (**उपासते**) प्राप्त करके सेवन करते हैं, (**तया**) उस (**मेधया**) मेधा-बुद्धि वा धन से (**माम्**) मुझे (**अद्य**) आज (**मेधाविनं**) प्रशंसित बुद्धिवाला (**कुरु**) कर दीजिये। (**स्वाहा**) इस सत्य-वचन और प्रार्थना के साथ मैं यह आहुति आपको अर्पित करता हूँ।।६।।

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।

यद् भद्रन्तन्न आ सुव ।।७।। **-[यजुः० ३०/३]**

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**देव**) शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता, (**सवितः**) सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त परमेश्वर! आप कृपा करके हमारे (**विश्वानि**) सम्पूर्ण (**दुरितानि**) दुर्गुण, दुर्व्यसन, दुर्जन और दुःखों को (**परा, सुव**) दूर कर दीजिये और (**यत्**) जो (**भद्रम्**) कल्याणकारक गुण कर्म, स्वभाव, पदार्थ और प्राणी हैं, (**तत्**) वे सब (**नः**) हमको (**आ, सुव**) प्राप्त कराइये।।७।।

ओम् अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।

युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठांते नम उक्तिं विधेम।।८।।

-[यजुः० ४०/१६]

अर्थ-(**ओम्**) हे सर्वरक्षक (**अग्ने**) स्वप्रकाश-ज्ञानस्वरूप, सब जगत् को प्रकाशित करनेवाले (**देव**) सकल-सुखदाता परमेश्वर! आप (**विद्वान्**) सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं। अतः कृपा करके (**अस्मान्**) हम लोगों को (**राये**) ज्ञान-विज्ञान और राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए (**सुपथा**) अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से (**विश्वानि**) सम्पूर्ण (**वयुनानि**) प्रज्ञान और उत्तम-कर्म (**नय**) प्राप्त कराइये और (**अस्मत्**) हमसे (**जुहुराणम्**) कुटिलतायुक्त (**एनः**) पापरूप कर्म को (**युयोधि**) दूर कीजिये। इस कारण हम लोग (**ते**) आपकी (**भूयिष्ठाम्**) बहुत प्रकार की स्तुति-रूप (**नमः**) नम्रतापूर्वक (**उक्तिम्**) प्रशंसा (**विधेम**) सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें।।८।।

यदि इच्छा और समय हो तो गायत्री, आदि मन्त्रों से अतिरिक्त आहुतियाँ दे सकते हैं। इसके पश्चात् निम्नलिखित पूर्णाहुति-मन्त्र तीन वार

उच्चारण करके तीन आहुतियाँ देवें-

पूर्णाहुति-मन्त्रः

ओं सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ॥१॥

ओं सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ॥२॥

ओं सर्वं वै पूर्णं स्वाहा ॥३॥

अर्थ-(**ओम्**) हे परमेश्वर! आपकी कृपा से (**सर्वम्**) हमारे समस्त कार्य (**पूर्णम्**) पूर्ण होवें (**स्वाहा**) आपसे हमारी यही प्रार्थना है।

"(**सर्वम् वै०**) हे जगदीश्वर! हम परोपकार के लिए जिस कर्म को करते हैं, वह कर्म आपकी कृपा से परोपकार के लिए समर्थ हो। इसलिए यह कर्म आपको समर्पित है।"

-[महर्षि दयानन्द, पञ्चमहायज्ञविधि पृष्ठ 32]

शान्ति-मन्त्र

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥ यजु० ३६/१७

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

पूर्णमासी की आहुतियाँ

**ओ३म् अग्नये स्वाहा ॥१॥ ओ३म् अग्नीषोमाभ्याम् स्वाहा ॥२॥
ओ३म् विष्णवे स्वाहा ॥३॥**

अमावस्या की आहुतियाँ

**ओ३म् अग्नये स्वाहा ॥१॥ ओ३म् इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा ॥२॥
ओ३म् विष्णवे स्वाहा ॥३॥**

पितृ यज्ञ

वैदिक धर्म में तीसरा महायज्ञ 'पितृयज्ञ' है। 'पितृ' शब्द का अर्थ है- 'पालन-पोषण' और रक्षण करनेवाला व्यक्ति।' इस प्रकार सन्तानों या छोटों का पालन-पोषण और रक्षा करनेवाले व्यक्ति पितर कहलाते हैं।

'पा-रक्षणे' धातु से 'नप्तृनेष्टृत्वष्टृहोतृपोतृभ्रातृजामातृमातृपितृदुहितृ (उणा0 २/९५) सूत्र से तृच् होकर 'पितृ' पद सिद्ध होता है। एकशेष समास में **'माता च पिता च इति पितरौ'**

'पिता पाता वा पालयिता वा जनयिता' -(निरुक्त ४/२४)

अर्थात् पालन-पोषण और रक्षण करनेवाला ही पिता है। ऐसा निरुक्त में कहा गया है। **'पान्ति पालयन्ति रक्षन्ति अन्न-विद्या-सुशिक्षादिदानैः ते पितरः।'** ऋग्0 दया0भाष्य १/६२/२ अर्थात् जो भोजन, वस्त्रादि से पालन-पोषण, रक्षण और विद्या-सुशिक्षा देते हैं, वे सब पितर होते हैं।

इस प्रकार सन्तानों का पालन-पोषण और रक्षा करनेवाले- माता-पिता, पितामह-पितामही (दादा-दादी), प्रपितामह-प्रपितामही (परदादा-परदादी), नाना-नानी, ताऊ-ताई, चाचा-चाची, मौसा- मौसी, मामा-मामी, फूफा-बुआ, बड़े भाई-भाभी, आदि सभी तथा विद्या और सुशिक्षा देनेवाले-आचार्य, गुरु देव, ऋषि, तपस्वी, ज्ञानी-विद्वान् आदि सभी पितर संज्ञक होते हैं।

उपर्युक्त जीवित पितरों की श्रद्धापूर्वक प्रतिदिन सेवा-शुश्रूषा व सम्मान करना तथा उन्हें भोजन वस्त्र आदि आवश्यक पदार्थ देकर तृप्त करना ही 'पितृयज्ञ' है।

अतिथि यज्ञ

'अतिथि' शब्द की व्युत्पत्ति और उसका अर्थ- 'अत-सातत्यगमने' धातु से इथिन्' प्रत्यय लगने पर 'अतिथि' शब्द की सिद्धि होती है, जिसका अर्थ है- सदैव भ्रमण करनेवाला, परिव्राजक या यात्री। 'अतति गतिकर्मा' (**निघण्टु २/१४**)- 'अत' धातु गत्यर्थक है, जो किसी के घर आता है, अथवा भ्रमणशील परिव्राजक यात्री। इसके अतिरिक्त 'तिथि' शब्द के साथ 'नञ्' समास के योग से भी अतिथि शब्द बनता है, न + तिथि = अतिथि। इस सिद्धि के आधार पर 'अतिथि' शब्द का अर्थ है- **'न विद्यते नियता तिथिर्यस्य' 'अविद्यमाना तिथिर्यस्य'**- अर्थात् जिसके आने की तिथि निश्चित न हो, जो आकस्मिक-रूप से आ जाये,, उसे 'अतिथि' कहते हैं।

इसके साथ ही किसी विशेष अवसर पर अथवा नियत तिथि पर आने वाले मनुष्यों को भी अतिथि माना गया है। **''अतिथिरभ्यतितो गृहान् भवति। अभ्येति तिथिषु परकुलानीति वा गृहाणीति वा।''** (निरुक्त **४/५**) अर्थात् गृह में आने वाला व्यक्ति अतिथि होता है जो नियत तिथि में अथवा नियत उपलक्ष्य में पराये घर आता है।

एकरात्रं तु निवसन्नतिथिर्ब्राह्मणः स्मृतः।
अनित्यं हि स्थितो यस्मात्तस्माद‌तिथिरुच्यते॥ -**मनु० ३/१०२**)

अर्थ- (ब्राह्मणः) विद्वान् व्यक्ति (एकरात्रं तु निवसन्) जो एक ही रात्रि तक पराये घर में रहे उसे (अतिथि स्मृतः) अतिथि कहा गया है, (यस्मात् हि) क्योंकि जिस कारण से वह नित्य नहीं ठहरता है अथवा जिसका आना अनिश्चित होता है, इसी कारण से उसे (अतिथि उच्यते) अतिथि कहा जाता है।

''यः श्रेष्ठतामश्नुते स वा अतिथिः भवति।'' -(**ऐ०आ० १/१/१**)

अर्थात्- जो श्रेष्ठ गुण-कर्म स्वभाव वाला मनुष्य, वही अतिथि होता है।।

वैदिक संस्कृति में अतिथि की देव संज्ञा मानी गयी है। इसलिए ''**अतिथिदेवो भव**'' कहा गया है। परिचित-अपरिचित किसी भी वर्ग या वर्ण का क्यों न हो वह परिवार में सत्कार्य है। उसका मन वाणी एवं

जलपानादि से स्वागत सत्कार करना आवश्यक बताया गया है। आर्यों के लिये यह सर्वथा उपादेय एवं करणीय यज्ञ हैं।

बलिवैश्वदेवयज्ञ विधि

निम्नलिखित 10 मन्त्रों से घृत के पात्र में शक्कर आदि मिला कर बलिवैश्वदेव यज्ञ के निमित्त आहुति दें

ओ३म् अग्नये स्वाहा ॥१॥ ओ३म् सोमाय स्वाहा ॥२॥ ओ३म् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा ॥३॥ ओ३म् विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ॥४॥ ओ३म् धन्वन्तरये स्वाहा ॥५॥ ओ३म् कुह्वै स्वाहा ॥६॥ ओ३म् अनुमत्यै स्वाहा ॥७॥ ओ३म् प्रजापतये स्वाहा ॥८॥ ओ३म् द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा ॥९॥ ओ३म् स्विष्टकृते स्वाहा ॥१०॥

तत्पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रों से बलि (हवि) का दान करें:-

ओ३म् सानुगायेन्द्राय नमः। इससे पूर्व॥ **ओ३म् सानुगाय यमाय नमः।** इससे दक्षिण॥ **ओ३म् सानुगाय वरुणाय नमः।** इससे पश्चिम॥ **ओ३म् सानुगाय सोमाय नमः।** इससे उत्तर॥ **ओ३म् मरुद्भ्यो नमः।** इससे द्वार॥ **ओ३म् अद्भ्यो नमः।** इससे जल॥ **ओ३म् वनस्पतिभ्यो नमः।** इससे मूसल और ऊखल॥ **ओ३म् श्रियै नमः।** इससे ईशान॥ **ओ३म् भद्रकाल्यै नमः।** इससे नैऋत्य॥ **ओ३म् ब्रह्मपतये नमः। ओ३म् वास्तुपतये नमः।** इससे मध्य॥ **ओ३म् विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ओ३म् दिवाचरेभ्यो भूतेभ्यो नमः। ओ३म् नक्तंचारिभ्यो भूतेभ्यो नमः।** इससे ऊपर॥ **ओ३म् सर्वात्मभूतये नमः।** इससे पृष्ठ॥ **ओ३म् पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधाभ्यः नमः।** इससे दक्षिण दिशा में बलि का दान करें।

पर्व प्रदीप

१-नव संवत्सरोत्सवः (संवत्सरेष्टि)

वैदिक संस्कृति में समय-समय पर पर्वों, त्यौहारों की सोल्लास मनाने का प्रचलन आदिकाल से रहा है। पर्वों का अर्थ ही जोड़ना एवं प्रीति देना है। समाज में सरसता रहे इसलिए पर्वों का समाज के लिए बड़ा महत्त्व है। इस पुस्तक में सब पर्व न देकर मुख्य प्रचलित पर्व दिये जा रहे हैं ताकि व्यक्ति अपने आप इस पुस्तक की सहायता से अपने परिवार अथवा समाज में पर्व वैदिक रीति से सम्पन्न कर सके।

पद्धति

गृह्य कृत्य- प्रातः सामान्य पर्व पद्धति में प्रदर्शित विधानानुसार गृह के परिमार्जन, शोधन, लेपनादि के पश्चात् नवीन शुद्ध स्वदेशीय वस्त्र परिधानपूर्वक, सपरिवार सामान्य होम करके निम्नलिखित संवत्सर वर्णनपरक मन्त्रों से विशेष अधिक आहुतियाँ दी जायें।

संवत्सरोऽसि, परिवत्सरोऽसीदावत्सरोऽसीद्वत्सरोऽसि वत्सरोऽसि। उषसस्ते कल्पन्तामहोरात्रास्ते कल्पन्तामर्द्धमासास्ते कल्पन्तां मासास्ते कल्पन्तामृतवस्ते कल्पन्ताँसंवत्सरस्ते कल्पताम्। प्रेत्याऽएत्यै संचाञ्च प्र च सारय सुपर्ण चिदसि तया देवतयाऽङ्गिरस्वद् ध्रुवः सीद ॥१॥

यजुर्वेद २७/ ४५ ॥

यमाय यमसूमथर्वभ्योऽवतोकाँ संवत्सराय पर्य्यायिणीं
परिवत्सरायाविजातामिदावत्सरायातीत्वरीमि द्वत्सरायातिष्कद्वरीं वत्सराय
विजर्जशय **संवत्सराय पलिक्नीमृभुभ्यो** ऽजिनसन्धँसाध्येभ्यश्चर्मम्नम् ॥२॥

यजुर्वेद ३०/ १५॥

द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क **उ तच्चिकेत।**
तस्मिन्त्साकं त्रिशता न शंकवोऽर्पिताः षष्टिर्न चलाचलासः ॥३॥

ऋ० मं. १/ १६४/४८॥

सप्त युञ्जन्ति रथमेकचक्रमेको अश्वो वहति सप्तनामा।
त्रिनाभि चक्रमजरमनर्वं यत्रेमा विश्वा भुवनाधि तस्थुः ॥४॥

ऋ० १/ १६४/२॥

द्वादशारं नहि तज्जराय वर्वर्त्ति चक्रं परिद्यामृतस्य।
आ पुत्रा अग्ने मिथुनासो अत्र सप्त शतानि विंशतिश्च तस्थुः ॥५॥
पञ्चपादं पितरं द्वादशाकृतिं दिव आहु परे अर्द्धे पुरीषिणम्।
अथेमे अन्य उपरे विचक्षणं सप्तचक्रे षडर आहुरर्पितम् ॥६॥
पञ्चारे चक्रे परिवर्त्तमाने तस्मिन्ना तस्थुर्भुवनानि विश्वा।
तस्य नाक्षस्तप्यते भूरिभारः सनादेव न शीर्यते सनाभिः ॥७॥
सनेमि चक्रमजरं वि वावृत उत्तानायां दश युक्ता वहन्ति।
सूर्यस्य चक्षु रजसैत्यावृतं तस्मिन्नार्पिता भुवनानि विश्वा ॥८॥

ऋग० १/१६४/ ११, १२, १३, १४॥

संवत्सरस्य प्रतिमां यां त्वा रात्र्युपास्महे।
सा न आयुष्मतीं प्रजा रायस्पोषेण सं सृज ॥९॥

अथर्व० ३। १०। ३॥

यस्मान्मासा निर्मितास्त्रिंशदराः संवत्सरो यस्मान्निर्मितो द्वादशारः।
अहोरात्रा यं परियन्तो नापुस्तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम् ॥१०॥

अथर्व० ४। ३५। ४॥

---

(२) आर्यसमाज स्थापना दिवस

चैत्रसुदी प्रतिपदा

आनन्द सुधासार दयाकर पिला गया।
भारत को दयानन्द दुबारा जिला गया।
डाला सुधार वारि बढ़ी बेल मेल की।
देखो समाज-फूल फबीले खिला गया।

-महाकवि नाथूराम शर्मा 'शंकर' कृत

पद्धति

गृह्य कृत्य- प्रातः सामान्य पर्व पद्धति में पूर्व-प्रदर्शित विधानानुसार गृह के परिमार्जन, शोधन, लेपन आदि के पश्चात् नवीन शुद्ध स्वदेशी वस्त्र परिधान पूर्वक सपरिवार सामान्य होम करके निम्नलिखित मन्त्रों से विशेष अधिक आहुतियां देवें:-

सं जानीध्वं सं पृच्यध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवा भागं यथा पूर्वे संजानानां उपासते ॥१॥ अथर्व० ६। ६४। १॥

सं वः पृच्यन्तां तन्वः सं मनांसि समु व्रता। सं वोऽयं ब्रह्मणस्पतिर्भगः सं वो अजीगमत् ॥२॥ अथर्व० ६। ७४। १॥

ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः। अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त एत सध्रीचीनान्वः संमनसस्कृणोमि ॥३॥

अथर्व० ३। ३०। ५॥

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि। सम्यंचोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः ॥४॥ अथर्व० ३। ३०। ६॥

सध्रीचीनान्वः संमनस्कृणोम्येकश्नुष्टीन्त्संवननेन सर्वान्।
देवा इवाऽमृतं रक्षमाणाः सायंप्रातः सौमनसो वो अस्तु ॥५॥

अथर्व० ३। ३०। ७॥

सं वो मनांसि सं व्रता समाकुतीर्नमयामसि ।अमी ये विव्रता स्थनतान्व : सं नमयामसि ॥ ६॥ **अथर्व० ६। ९४। १॥**

समानो मंत्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्।

समानं मंत्रमभिमत्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ।।७।।

ऋ० १०। १९१। ३॥

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो यथा वः सु सहासति ।।८।। **ऋ० १०। १९१/४॥**

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

ऋ० ३। ६२। १०॥

दृतेदृंह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् मित्रस्याहं चक्षुषासर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ।।१०।।

यजु० ३६। १८॥

इस अवसर पर आर्य समाज के प्रचार प्रसार सम्बन्धी कार्यक्रमों का शानदार आयोजन करें।

---

(३) श्री रामनवमी

चैत्रसुदी नवमी

पद्धति

गृह्य कृत्य- गृह को शुद्ध पवित्र करके यज्ञ होना चाहिए। सुन्दर सात्विक मिष्ठान्न आदि पाक बनाकर सपरिवार मिलकर भोजन करें तथा अपने आश्रित सेवकों आदि को भी भोजन दें।

सामाजिक कृत्य- किसी एक समय प्रातः दोपहर बाद या सायंकाल आर्य समाज मन्दिर में एकत्र हो भव्य यज्ञ करें। मर्यादा पुरुषोत्तम राम के जीवन पर निबन्ध कविता पाठ, भाषण और मधुर संगीत आदि के पश्चात् सभा समाप्त हो।

(४) श्रावणी उपाकर्म

श्रावणसुदी पूर्णिमा

पद्धति

प्रथम संस्कार विधि में लिखी हुई रीतियों से अग्निस्थापनादि करके, आघार आज्यभागाहुतियों को देकर (१) **ब्रह्मणे स्वाहा** (२) **छन्दोभ्यः स्वाहा।** ये दो आहुतियाँ देकर, घी की निम्नलिखित दस आहुति दें।

१- सावित्र्यै स्वाहा। २- ब्रह्मणे स्वाहा। ३- श्रद्धायै स्वाहा।

४- मेधायै स्वाहा। ५- प्रज्ञायै स्वाहा। ६- धारणायै स्वाहा।

७- सदसस्पतये स्वाहा। ८- अनुमतये स्वाहा। ९- छन्दोभ्यः स्वाहा।

१०- ऋषिभ्यः स्वाहा

तदनन्तर निम्नलिखित ऋचाओं से आहुति दें।

बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत्प्रैरत नामधेयं दधानाः।
यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत्प्रेणा तदेषांनिहितं गुहाविः॥

ऋ.० १०/७१/ १॥

सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्रधीरा मनसा वाचमक्रत।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि ॥

ऋ.० १०/७१/ २॥

यज्ञेन वाचः पदवीयमायन्तामन्वविन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम्।
तामाभृत्या व्यदधुः पुरुत्रा तां सप्त रेभा अभि सं नवन्ते॥

ऋ.० १०/ ७१/ ३॥

उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्वः शृण्वन्न शृणोत्येनाम्।
उतो त्वस्मै तन्वं वि सस्त्रे जायेव पत्य उशती सुवासाः॥

ऋ.० १०/७१/ ४॥

उत त्वं सख्ये स्थिरपीतमाहुर्नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु।
अधेन्वा चरति माययैष वाचं शुश्रुवां अफलामपुष्पाम्॥

ऋ.०/१०/७१/ ५॥

यस्तित्याज सचिविदं सखायं न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति।
यदीं श्रृणोत्यलकं श्रृणोति नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम्॥

ऋ.० १०/ ७१/ ६॥

अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो मनोजवेष्वसमा बभूवुः।
आदघ्नास उपकक्षास उ त्वे ह्रदा इव स्नात्वा उ त्वे ददृश्रे॥

ऋ.० १०/७१/ ७॥

हृदा तष्टेषु मनसो जवेषु यद्ब्रह्मणाः संयजन्ते सखायः।
अत्राह त्वं वि जहुर्वेद्याभिरोहब्रह्मणो वि चरन्त्यु त्वे॥

ऋ.० १०/ ७१/ ८॥

इमे ये नार्वाङ् न परश्चरन्ति न ब्राह्मणासो न सुतेकरासः।
त एते वाचमभिपद्य पापया सिरीस्तन्त्रं तन्वते अप्रजज्ञयः॥

ऋ.० १०/ ७१/ ९॥

सर्वे नन्दन्ति यशसागतेन सभासाहेन सख्या सखायः।
किल्विषस्पृत् पितुषणिर्ह्येषामरं हितो भवति वाजिनाय॥

ऋ.० १०/ ७१/ १०॥

ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान् गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु।
ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रां विमिमीत उ त्वः॥

ऋ.० १०/ ७१/११॥

इसके पश्चात् यजुर्वेद के इस मन्त्र से-

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्। सनिं मेधामयासिषँ स्वाहा।

यजु० ३२/१३

अग्निमीऽ पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजं होतारं रत्नधातमम्। ऋ० १-१-१

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।

समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥ ऋ० १०-१९१-३

इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयत् श्रेष्ठतमाय कर्मण अप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशँसो धुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि॥

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।

योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम् ॥ओ३म्॥ खं ब्रह्म॥

यजु० ४०-१७

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये॥

नि होता सत्सि बर्हिषि॥ **साम० १**

मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः परावत आ जगन्था परस्याः॥

सृकं संशाय पविमिन्द्र तिग्मं वि शत्रून् ताढि वि मृधो नुदस्व॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।

स्थिरै रङ्गैस्तुष्टुवां सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥**साम० २१-१-१-२ (१८७४)**

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।

स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ **साम०१-१-१-३ (१८७५)**

ओ३म् शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभि स्रवन्तु नः॥

यजु० ३६/१२

पनाय्यं तदश्विना कृतं वां वृषभो दिवो रजसः पृथिव्याः।

सहस्रशंसा ऊतये गविष्ठौ, सर्वांमित तामुपयाता पिबध्यै॥

इसके पश्चात् यह मन्त्र पढ़ें।

सह नोऽस्तु सह नोऽवतु, सह न इदं वीर्य्यवदस्तु।

ब्रह्मा इन्द्रस्तद्वेद येन यथा न विद्विषामहे।

इस वेद मन्त्र को पढ़कर सामवेद का वामदेव्यगान करें।

यहां पर्व वेदाध्ययन परम्परा को सशक्त बनाने हेतु हर्षोल्लास पूर्वक मनाया जाता है।

(५) श्रीकृष्ण जन्माष्टमी

भाद्रपद वदि अष्टमी

पद्धति

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के गृह्य तथा सामाजिक कृत्य भी श्री राम जयन्ती में लिखित विवरण के अनुसार ही हैं। अर्थात् सामान्य प्रकरण के पश्चात् निम्नांकित मन्त्रों से आहुति देवें-

१. **ओ३म् तेजोऽसि तेजो मयि धेहि स्वाहा।**

२. **ओ३म् वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि स्वाहा।**

३. **ओ३म् बलमसि बलं मयि धेहि स्वाहा।**

४. **ओ३म् ओजोऽस्योजो मयि धेहि स्वाहा।**

५. **ओ३म् मन्युरसि मन्युं मयि धेहि स्वाहा।**

६. **ओ३म् सहोऽसि सहो मयि धेहि स्वाहा।**

---

(६) विजयादशमी

आश्विन सुदी दशमी

पद्धति

अन्य पर्वों के समान गृह का परिमार्जन और लीपनादि करके **सामान्य** होम किया जाए। उसमें क्षात्र धर्म में द्योतक और यात्रा से लाभ के सूचक निम्नलिखित मन्त्रों से विशेष आहुतियाँ दी जाए। इस अवसर पर संस्कृत अस्त्र और परिष्कृत उपकरण भी यज्ञ स्थली में उपस्थित किये जायें। उक्त पर्व पर किये जाने वाले यज्ञ में निम्न विशेष आहुतियां इस प्रकार हैं-

संशितं म इदं ब्रह्म संशितं वीर्यं १ बलम्।

संशितं क्षत्रमजरमस्तु जिष्णुर्येषामस्मि पुरोहितः स्वाहा॥१॥

समहमेषां राष्ट्रं स्यामि समोजो वीर्यं १ बलम्।

वृश्चामि शत्रूणां बाहननेन हविषाहम् स्वाहा॥२॥

नीचैः पद्यन्तामधरे भवन्तु ये नः सूरिं मघवानं पृतन्यान्।

क्षिणामि ब्रह्मणामित्रानुन्नयामि स्वानहम् स्वाहा॥३॥

तीक्ष्णीयांसः परशोरग्नेस्तीक्ष्णतरा उत।

इन्द्रस्य वज्रात्तीक्ष्णी यांसो येषामस्मि पुरोहितः स्वाहा॥४॥

एषामहमायुधा सं स्याम्येषां राष्ट्रं सुवीर वर्धयामि।

एषां क्षत्रमजरमस्तु जिष्ण्वे एषां चित्तं विश्वेऽवन्तु देवाः स्वाहा॥५॥

उद्धर्षन्तां मघवन् वाजिनान्युद्वीराणां जयतामेतु घोषः।

पृथग् घोषा उलुलयः केतुमन्त उदीरताम्।

देवा इन्द्रज्येष्ठा मरुतो यन्तु सेनया॥ स्वाहा ६॥

प्रेता जयता नर उग्रा वः सन्तु बाहवः।

तीक्ष्णेषवोऽबधन्वनो हतोग्रायुधा अबानुग्रबाहवः स्वाहा॥७॥

अथर्ववेद,३ /१९/१-८॥

अवसृष्टा परापत शरव्ये ब्रह्म संशिते।
जयामित्रान प्र पद्यस्व जह्येषां वरं वरं मामिषां मोचि कश्चन ।।८।।

ये बाहवो या इषवो धन्वनां वीर्याणि च।

असीन्परशूनायुधं चित्ताकूतं च यद्धृति। सर्वं तदर्बुदे त्वममित्रेभ्यो दृशे कुरूदारांश्च प्रदर्शय स्वाहा ॥८॥

उत्तिष्ठत सं नह्यध्वं मित्रा देवजना यूयम्। संदृष्टा गुप्ताः वः सन्तु या नो मित्राण्यर्बुदे स्वाहा॥९॥

उत्तिष्ठतमा रभेथामादानसंदानाभ्याम्।

अमित्राणां सेना अभि धत्तमर्बुदे स्वाहा॥१०॥

अथर्ववेद, ११/ ९/ १-३॥

---

(७) दीपावली पर्व

श्रीमद्दयानन्द निर्वाण कार्तिक वदि अमावस्या

पद्धति

गृह्य कृत्य- यह दीवाली का पर्व वर्ष भर में घरों की लिपाई-पुताई आदि संस्कारों के लिए विशेषतः उद्दिष्ट है, इसलिए अपनी सुविधानुसार दीवाली से पूर्व दिन सायंकाल तक प्रचलित प्रथानुसार यह सब कार्य समाप्त हो जाना चाहिए। कार्तिकी अमावस्या के दिन प्रातःकाल सामान्य पर्व पद्धति में प्रदर्शित प्रकारानुसार यज्ञशाला व आवासगृह की स्वच्छता करके स्वदेशीय नवीन शुद्ध वस्त्र परिधानपूर्वक ग्रहण करके सामान्य होम करके निम्नलिखित मन्त्रों से स्थालीपाक से ३८ विशेष आहुतियाँ दी जाए। स्थालीपाक नवागत श्रावणी शस्य के अन्न से बनाया गया पायस (खीर) हो। हवन के अन्य साकल्य में लाजा (नवीन धानों की खील) विशेषतः मिलाई जाय।

ओ३म् परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्।
चक्षुष्मते श्रृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान् स्वाहा॥१॥
मृत्योः पदं योप यन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः स्वाहा॥२॥
इमे जीवा वि मृतैराववृत्रन्नभूद्भद्रा देवहूतिर्नो अद्य प्राञ्चो
अगाम नृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः स्वाहा॥३॥
इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो अर्थमेतम्।
शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीरन्तर्मृत्युं दधतां **पर्वतेन स्वाहा॥४॥**
यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथा ऋतुव ऋतुभिर्यन्ति साधु।
यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूंषि कल्पयैषाम् स्वाहा॥५॥

ऋ० १०/१८/१-५॥

आयुष्मतामायुष्कृतां प्राणेन जीव मा मृथाः।
व्यह१ सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा स्वाहा॥६॥

अथर्व, ३/ ३१/ ८॥

ब्रह्मचर्य्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत।
इन्द्रो ह ब्रह्मचर्य्येण देवेभ्यः स्व१राभरत् स्वाहा॥ ७॥

अथर्व, ११/ /५/१9॥

शस्येष्टि मंत्राः

शतायुधाय शतवीर्याय शतोतयेभिमातिषाहे। शतं यो नः शरदो अजीजादिन्द्रो नेषादति दुरितानि विश्वा स्वाहा ॥८॥

ये चत्वारः पथयो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी वियन्ति। तेषां यो आ ज्यानिमजीजिमावहास्तस्मै नो देवाः परिदत्तेह सर्वम् स्वाहा॥९॥

ग्रीष्मो हेमन्त उत नो वसन्तः शरद्वर्षाः सुवितन्नो अस्तु। तेषामृतूनां शतशारदानां निवात एषामभये स्याम स्वाहा॥१०॥

इद्वत्सराय परिवत्सराय संवत्सराय कृणुता बृहन्नमः। तेषां वयं सुमतौ यज्ञियानां ज्योग् जीता अहताः स्याम स्वाहा ॥११॥

गोभि0 गृह्य0 सू0 प्रपाठक ३, खण्ड ७, सूत्र १०÷११॥ म० ब्रा. २/१/९-१२।

ओ३म् पृथिवी द्यौः प्रदिशो दिशो यस्मै द्युभिरावृताः।
तमिहेन्द्रमुपह्वये शिवा नः सन्तु हेतयः स्वाहा॥१२॥

ओ३म् यन्मे किंचिदुपेप्सितमस्मिन् कर्मणि वृत्रहन्। तन्मे सर्वं समृध्यतां जीवतः शरदः शतम्।स्वाहा॥१३॥

ओं सम्पर्ति भू भूमिर्वृष्टिजयैठ्यं श्रीः
प्रजामिहावतु स्वाहा। इदमिन्द्राय-इदन्नमम ।।१४।।

ओ३म् यस्या भावे वैदिकलौकिकानां भूतिर्भवति कर्मणाम्। इन्द्रपत्नीमुपह्वये सीतां सा मे त्वनपायिनी भूयात्कर्मणि कर्मणि स्वाहा। इदमिन्द्रपत्न्यै, इदन्न मम॥१५॥

ओ३म् अश्वावती गोमती सूनृतावती बिभर्ति या प्राणभृता अतन्द्रिता॥ खल'मालिनीमुर्वरामस्मिन् कर्मण्युपह्वये ध्रुवां सा मे त्वनपायिनी भूयात् स्वाहा। इदं सीतायै, इदन्न मम॥१६॥

ओ३म् सीतायै स्वाहा॥१७॥

ओ३म् प्रजायै स्वाहा॥१८॥

ओ३म् शमायै स्वाहा॥१९॥

ओ३म् भूत्यै स्वाहा॥२०॥

ओ३म् व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च मे खल्वाश्च मे प्रियङ्ग्वश्च मेऽणवश्च मे श्यामाकाश्च मे नीवाराश्च मे गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् स्वाहा॥२१॥

यजु0 १८/१२॥

ओ३म् वाजो नः सप्त प्रदिशश्चतस्रो वा परावतः। वाजो नो विश्वैर्देवैर्धनसाताविहावतु स्वाहा॥२२॥

ओ३म् वाजो नो अद्य प्रसुवाति दानं वाजो देवां ऋँ ऋतुभिः कल्पयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं जजान विश्वऽआशा वाजपतिर्जयेयम्॥स्वाहा॥२३॥

•ओ३म् वाजः पुरस्तादुत मध्यतो नो वाजो देवान्हविषा वर्द्धयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं चकार सर्वा आशाऽवाजपतिर्भवेयम् स्वाहा॥२४॥

यजुर्वेद, १८/३२, ३३, ३४॥

ओ३म् सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक्।
धीरा देवेषु सुम्नयौ स्वाहा॥२५॥

ओ३म् युनक्त सीरा वि युगा तनोत कृते योनौ वपतेह बीजम्।
विराजः श्नुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत्सृण्यः पक्वमा यवन् स्वाहा॥२६॥

ओ३म् लाङ्गलंपवीरवत्सुशीमं सोमसत्सरु। उदिद्वपतु गामविं प्रस्थावद्रथवाहनं पीबरीं च प्रफर्व्यम् स्वाहा ॥२७॥

ओ३म् इन्द्रः सीतां निगृह्णातु तां पूषाभिरक्षतु।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् स्वाहा॥२८॥

ओ३म् शुनं सुफाला वि तुदन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अनु यन्तु वाहान्।
शुनासीरा हविषा तोशमाना सुपिप्पला ओषधीः कर्तमस्मै स्वाहा॥२९॥

ओ३म् शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम्।
शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय।स्वाहा॥३०॥

ओ३म् शुनासीरेह स्म मे जुषेथाम्।
यदिद्वि चक्रथुः पयस्तेनेमामुप सिञ्चतम् ॥ स्वाहा॥ ३१॥
अथर्व० ३/ १७/ १-७॥

ओ३म् सीते वन्दामहे त्वार्वाची सुभगे भव।
यथा नः सुमना असो यथा नः सुफला भुवः।।स्वाहा॥३२॥
ओ३म् घृतेन सीता मधुना समक्ता विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः।
सा नः सीते पयसाभ्याववृत्स्वोर्जस्वती घृतवत्पिन्वमानः।।स्वाहा॥३३॥
अथर्व० ३/ १७/ ८-९॥

ओ३म् इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा। इदमिन्द्राग्नीभ्याम् इदन्न मम॥३४॥
ओ३म् विश्वेभ्यो देवभ्यः स्वाहा। इदं विश्वेभ्यो देवेभ्य इदन्न मम॥३५॥
ओ३म् द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा। इदं द्यावापृथिवीभ्याम् इदन्न मम॥३६॥
ओ३म् स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणीहि विश्वांश्च देवः पृतना अभिष्णक्।
सुगन्नु पन्थां प्रदिशन्न एहि त्योतिष्मध्येह्यजरं न आयुः स्वाहा॥३७॥
ओ३म् यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं **स्विष्टं सुहुतं करोतु मे अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां** कामानां **समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्तसमर्द्धय स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते इदन्न मम॥३८॥ शतपथ १४-९-४-२४**

पूर्णाहुति के पश्चात् खीलों और मिष्टान्न के (बताशे आदि) हुतशेष को यज्ञमण्डप में उपस्थित जनों में वितरण करके भक्षण किाय जाय।

अपराह्न में प्रचलित प्रथानुसार इष्टमित्रों को मिष्टान्न के उपायन (भेंट) दिये जायें। सायंकाल के समय आवास गृहों को सुचारु रुपेण सजाकर स्वसामर्थ्यानुसार दीपमाला की जाय।

सामाजिक कृत्य- अपराह्न व रात्रि में सुविधानुसार समाज मन्दिर आदि में एकत्र होकर आर्यसमाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द की स्मृति में सभा की जाय और उसमें ऋषि के गुणानुवाद पर भाषण, लेख और कविताओं का पाठ किया जाय इसी विषय पर मधुर संगीत हों।

---

(८) मकर और संक्रान्ति

पद्धति

गृह्यकृत्य- मकर संक्रान्ति के दिन प्रातः सामान्यपर्व पद्धति में प्रदर्शित विधानानुसार गृह के परिमार्जन, शोधन तथा लेपन आदि के पश्चात् नवीन शुद्ध स्वदेशीय वस्त्र-परिधान पूर्वक सपरिवार सामान्य हवन करें, जिसके साकल्य में तिल और शर्करा का परिमाण प्रचुर होना चाहिए और आहुतियों की मात्रा स्वसामर्थ्यानुसार बढ़ा देनी चाहिए। निम्नलिखित हेमन्त और शिशिर ऋतुओं के वर्णनपरक ऋचाओं से विशेष आहुतियाँ दी जाए।

ओ३म् सहश्च सहस्यश्च हैमन्तिकावृतूऽ
अग्नेरन्तः श्लेषोऽसि स्वाहा॥१॥
कल्पेताम् द्यावापृथिवी स्वाहा॥२॥
कल्पन्ताम् आप ओषधयः स्वाहा॥३॥
कल्पन्ताम्. अग्नयः पृथङ्मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः।, स्वाहा॥४॥
ये अग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवी इमे। हैमन्तिकावृतू अभिकल्पमाना इन्द्रमिव देवा अभिसंविशन्तु तया देवतयाऽग्ङिरस्वद् ध्रुवे सीदतम् स्वाहा॥५॥

यजुर्वेद 14 मन्त्र 27॥

ओ३म् तपश्च तपस्यश्च शैशिरावृतू, अग्नेरन्तः श्लेषोऽसि स्वाहा॥
कल्पेताम् द्यावापृथिवी स्वाहा॥६॥
कल्पन्ताम्, आप ओषधयः स्वाहा॥७॥
कल्पन्ताम्, अग्नयः पृथङ्मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः स्वाहा॥
ये अग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवी इमे शैशिरावृतूऽअभिकल्पमाना इन्द्रमिव देवा अभिसंविशन्तु तयादेवतयाऽङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम्।स्वाहा॥८॥

यजु0 १५/५७॥

तत्पश्चात् तिल के लड्डू (तिलवे) होम यज्ञ में समागत पुरुषों को हुतशेष के रूप में समर्पण किये जायँ और स्ववित्तानुसार कम्बल आदि दीन-दुखियों को दान दिये जायँ।

---

(९) वसन्त पंचमी

माघ सुदी पञ्चमी

पद्धति

गृह्यकृत्य- प्रातः सामान्य पर्वपद्धति में प्रदर्शित प्रकारानुसार गृह परिमार्जन (शोधन-लेपनादि) के पश्चात् स्वदेशीय पीताम्बर (पीतपट) परिधानपूर्वक सामान्य होम करके वसन्त वर्णनात्मक निम्नलिखित मन्त्रों से केशर मिश्रित (वा उसके अभाव में हरिद्रा-मिश्रित) हलुए के स्थालीपाक से पाँच अधिक आहुतियाँ दी जाएँ।

वसन्तेन ऋतुना देवा वसवस्त्रिवृता स्तुताः रथन्तरेण तेजसा हविरिन्द्रवयोदधुः॥१॥

यजु0 २१/२३॥

मधुश्च माधवश्च वासन्तिकावृतू अग्नेरन्तः श्लेषोऽसि कल्पेतां द्यावापृथिवी कल्पन्तामाप ओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ्मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः। येऽ अग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे। वासन्तिकावृतूऽ अभिकल्पमाना इन्द्रमिव देवा अभिसंविशन्तु तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवेसीदतम्॥स्वाहा॥२॥

यजु0 १३/ 25॥

मधु वाताऽऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः।
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः स्वाहा॥३॥
मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवं रजः।
मधु द्यौरस्तु नः पिता स्वाहा॥४॥
ओ३म् मधुमान् नो वनस्पतिर्मधुमाँ२ऽस्तु सूर्यः।
माध्वीर्गावो भवन्तु नः स्वाहा॥५॥ यजु0 १३/ २७-२९॥

और उपर्युक्त केशरयुक्त हलवे का ही हुतशेष यज्ञ में समागत सज्जन प्रसादरुप से भोजन करें तथा ऋतुराज के वर्णनपरक किसी कविता का मधुर गान किया जाय। ———

(१०) सीताष्टमी

फाल्गुन वदि अष्टमी

पद्धति

श्री सीताष्टमी पर्व की पद्धति भी अन्य वीर पर्वों और जयन्तियों के गृह्य और सामाजिक कृत्यों के अनुसार है, परन्तु सामान्य प्रकरण की पद्धति के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रों द्वारा 2 आहुति अधिक दी जाएँ।

अक्ष्यौ नौ मधुसंकाशे अनीकं नो समञ्जनम्।
अन्तः कृणुष्व मां हृदि मन इन्नो सहासति॥१॥
अभित्वा मनुजातेन दधामि मम वाससा।
यथासो मम केवलो नान्यासां कीर्तयाश्चन॥२॥

यह पर्व विशेषतः भारत की कुल देवियों के शिक्षा ग्रहण के लिए उद्दिष्ट और अभिप्रेत है, इसीलिए इसमें उनको विशेष भाग लेना चाहिए और उसका सारा प्रबन्ध उन्हीं के हाथ में होना चाहिए। इस अवसर पर पर्व के आनन्द वर्धनार्थ कन्याओं की बालोद्यानादि मनोरंजक क्रीड़ाओं की आयोजना होनी चाहिए।

---

(११) दयानन्द बोध रात्रि

फाल्गुनवदि १४

पद्धति

यह जन्म दिवस दयानन्द सप्ताह के रुप में शिवरात्रि तक प्रत्येक आर्यसमाज में मनाया जाए। प्रभात फेरियाँ निकाली जायँ। मन्दिरों में यज्ञ किए जाएँ। सार्वजनिक स्थानों पर जन सभाऐं की जायँ साहित्य वितरण और भाषणों द्वारा प्रचार किया जाए। आर्यसमाज की सदस्यता का अभियान चलाया जाए। दलितोद्धार एवं सहभोज का आयोजन किया जाए।

---

(१३) होलिकोत्सव

फाल्गुन सुदी पूर्णिमा

पद्धति

फाल्गुन पूर्णिमा की प्रातः सामान्य पद्धति में प्रदर्शित प्रकारानुसार नव पीताम्बर वा श्वेताम्बर परिधानपूर्वक सामान्य होम करके नवसस्येष्टि के निम्नलिखित मन्त्रों से स्थालीपाक की ३१ विशेष आहुतियाँ दी जाएँ। स्थालीपाक नवागत आषाढ़ी सस्य के गोधूम वा यवचूर्ण (आटे) से बनाया गया मोहनभोग (हलुवा) हो, हवन के अन्य साकल्य में नवागत यव (जौ) विशेषतः मिलाये जाएँ। यतः देवयज्ञ देवकार्य है और कर्मकाण्ड के सब ग्रन्थों में देवकार्य के पूर्वाह्न में ही करने का विधान है, इसलिए आषाढ़ी नवसस्येष्टि वा होलिकेष्टि भी पूर्वाह्न में करनी चाहिए। पौराणिकों का पूर्णमासी की रात्रि को होली जलाने का कृत्य कर्मकाण्डशास्त्र के विरुद्ध है। विशेष आहुतियों के मन्त्र यह हैं :-

शतायुधाय शतवीर्यायशतोतयेभिमातिषाहे। शतं यो नः शरदो अजीजादिन्द्रा नेषदति दुरितानि विश्वा।।स्वाहा।।१।।

ये चत्वारः पथयोदेवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी वियन्ति। तेषां यो अज्यानिमजीजिमावहास्तस्मै नो देवाः परिदत्ते सर्वे।। स्वाहा।।२।।

ग्रीष्मो हेमन्त उत नो वसन्तः शरद्वर्षाः सुवितन्नो अस्तु।
तेषामृतूनां शतशारदानां निवात एषामभये स्याम।।स्वाहा।।३।।

इद्वत्सराय परिवत्सराय संवत्सराय कृणुता बृहन्नमः। तेषां वयंसुमतौ यज्ञियानां ज्योग् जीता अहताः स्याम।। स्वाहा।।४।।

गोभि0 गृह्यसूत्र प्रपाठक ३, खण्ड 7 सू0 १0-११।।

•ओ३म् पृथिवी द्यौः प्रदिशो दिशो यस्मै द्युभिरावृताः।
तमिहेन्द्रमुपह्वये शिवा नः सन्तु हेतयः।। स्वाहा।।५।।

ओ३म् यन्मे किञ्चिदुपेप्सितमस्मिन् कर्मणि वृत्रहन्। तन्मे सर्वं समृध्यतां जीवतः शरदः शतं।। स्वाहा।।६।।

ओ३म् सम्पत्तिभूर्तिभूमिर्वृष्टिर्ज्यैष्ठ्यं श्रैष्ठ्यं श्रीः प्रजामिहावतु स्वाहा। इदमिन्द्राय, इदन्न मम।।७।।

ओ३म् यस्याभावे वैदिकलौकिकानां भूतिर्भवति **कर्मणाम्।**

इन्द्रपत्नीमुपह्वये सीतां सा मे त्वनपायिनी भूयात् (कर्मणि) कर्मणि स्वाहा। इदमिन्द्रपत्न्यै इदन्न मम॥८॥

ओ३म् अश्वावती गोमती सूनृतावती बिभर्ति या प्राणभृता अतन्द्रिता। खलमालिनीमुर्वरामस्मिन् कर्मण्युपह्वये ध्रुवाँसा मे त्वनपायिनी भूयात् स्वाहा। इदं सीतायै, इदन्न मम॥९॥

ओ३म् सीतायै स्वाहा॥१०॥

ओ३म् प्रजायै स्वाहा॥११॥

ओ३म् शमायै स्वाहा॥१२॥

ओ३म् भूत्यै स्वाहा॥१३॥

ओ३म् व्रीहयश्च मे यवाश्च मे माषाश्च मे तिलाश्च मे मुद्गाश्च मे खल्वाश्च मे प्रियङ्गवश्च मेऽणवश्च मे श्यामाकाश्च मे नीवाराश्च मे गोधूमाश्च मे मसूराश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् स्वाहा॥१४॥

यजु० अ० १८ मं० १२॥

ओ३म् वाजो नः सप्त प्रदिशश्चतस्रो वा परावतः .वाजो नो विश्वै र्देवैर्धनसाताविहावतु स्वाहा॥१५॥

ओ३म् वाजो नो अद्य प्रसुवाति दानं वाजो देवां ऋतुभिः कल्पयाति। वाजो हि मा सर्व वीरं जजान विश्वा आशा वाजपतिर्जयेयम् स्वाहा॥१६॥

ओ३म् वाजः पुरस्तादुत मध्यतो नो वाजो देवान् हविषा वर्धयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं चकार सर्वा आशा वाजपतिर्भवेयम् स्वाहा॥१७॥

य० अ० १८ मं० ३२,३३,३४॥

सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक्। धीरा देवेषु सुम्नयौ। स्वाहा॥१८॥

युनक्त सीरा वि युगा तनोत कृते योनौ वपतेह वीजम्। विराजः श्नुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत्सृण्यः पक्वा मा यवन्।स्वाहा॥१९॥

लाङ्गलं पवीरवत्सुशीमं सोमसत्सरु। उदिद्वपतु गामविं प्रस्थावद्रथवाहं पीवरीं च प्रफवर्यम्।स्वाहा॥२०॥

इन्द्रः सीतां निगृह्णातु तां पूषाभिरक्षतु। सा नः पयस्वती दुहामुत्तरां समाम्।स्वाहा॥२१॥

शुनं सुफाला वि तुदन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अनु यन्तु वाहान्। शुनासीरा

हविषा तोशमाना सुपिप्पला ओषधीः कर्तमस्मै॥ स्वाहा॥२२॥

शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लागङ्गलम्।

शुनं वरत्रा बुध्यन्तां शुनमष्टामुदिगङ्य॥ स्वाहा॥२३॥

शुनासीरेहस्म मे जुषेथाम्।

यद्दिवि चक्रथुः पयस्तेनमामुपसिञ्चतम्॥ स्वाहा॥२४॥

सीते वन्दामहे त्वार्वाची सुभगे भव। यथा नः सुमना असो यथा नः सुफला भुवः॥ स्वाहा॥२५॥

घृतेन सीता मधुना समक्ता विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः। साः नः सीते पयसाभ्यावर्वृत्स्वोर्जस्वती घृतवात्पिन्वमाना॥ स्वाहा॥२६॥

अथर्व - कां. ३ सूक्त - १७ मंत्र १-९

इन्द्राग्नीभ्यां इदन्त ममं ।।२७।।

विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा॥ इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यः इदन्न मम॥२८॥

द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा॥ इदं द्यावापृथिवीभ्याम् इदन्न मम॥२९॥

स्विष्टमग्ने अभितत्पृणीहि विश्वांश्च देवः पृतना अभिष्यक्। सुगन्नु पन्थां प्रतिशन्न एहि ज्योतिष्मद्धेह्यजरं न आयुः॥ स्वाहा॥३०॥

यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां **कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्धय स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते - इदन्न मम॥३१॥**

पूर्णाहुति. के पश्चात् हुतशेष हलुवे को वितरण करके भक्षण किया जाए। अपराह्न में सुविधानुसार आर्यसामाज मन्दिर आदि में सम्मिलित होकर हर्षोत्सव और प्रीति सम्मेलन किया जाए। उससे पूर्व आर्यपुरुष आर्यबन्धुओं के घरों पर जाकर उनसे प्रेम-संवर्धनार्थ भेंट करें और उनके मध्य में किसी प्रकार का मनोमालिन्य हो तो उसको भी उदारतापूर्वक परस्पर क्षमायाचना क्षमाप्रदान द्वारा दूर कर देवें और वहाँ से मिल-मिल कर स्वच्छ और प्रेमपूर्ण हृदय से युक्त होकर समाज-मन्दिर के उत्सव में पधारते रहें। सुमधुर गीतवाद्य का भी अवश्य प्रबन्ध किया जाय। उसमें उत्तमोत्तम उपदेशप्रद ''होली'' आदि सुन्दर पद्य गाये जाएँ। भारत की संगीत कला की उन्नति एवं विविध उत्सवों द्वारा ही हो सकती है। संगीत से ही उत्सवों की अन्वर्थ उत्सवता स्थिर रह सकती है।

(१) यज्ञ-प्रार्थना

पूजनीय प्रभो! हमारे भाव उज्जवल कीजिए।
छोड़ देवें छल-कपट को, मानसिक बल दीजिए।।१।।
वेद की गावें ऋचायें, सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे शोक-सागर से तरें।।२।।
अश्वमेधादिक रचायें यज्ञ पर-उपकार को।
धर्म-मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को।।३।।
नित्य श्रद्धा-भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें।
रोग पीड़ित विश्व के संताप सब हरते रहें।।४।।
भावना मिट जाये मन से पाप अत्याचार की।
कामनायें पूर्ण होवें यज्ञ से नर नारि की।।५।।
लाभकारी हो हवन हर प्राणधारी के लिए।
वायु-जल सर्वत्र हों शुभ गन्ध को धारण किये।।६।।
स्वार्थ-भाव मिटे हमारा प्रेम-पथ विस्तार हो।
'इदन्न मम' का सार्थक प्रत्येक में व्यवहार हो।।७।।
हाथ जोड़ झुकाय मस्तक वन्दना हम कर रहे।
'नाथ' करुणा-रूप करुणा आपकी सब पर रहे।।८।।

---

(२) मंगल-कामना

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्।।

सबका भला करो भगवान्, सब पर दया करो भगवान्।
सब पर कृपा करो भगवान्, सबका सवविध हो कल्याण।।

सुखी बसे संसार सब दुखिया रहे न कोय।
ये अभिलाषा हम सबकी भगवन् पूरी होय।।१।।

विद्या-बुद्धि-तेज-बल, सबके भीतर होय।
दूध-पूत-धन-धान्य से वञ्चित रहे न कोय।।२।।

आपकी भक्ति प्रेम से मन होवे भरपूर।
राग-द्वेष से चित्त मेरा कोसों भागे दूर।।३।।

मिले भरोसा आप का हमें सदा जगदीश।
आशा तेरे नाम की बनी रहे मम ईश।।४।।

पाप से हमें बचाइए करके दया दयाल।
अपनी भक्ति-प्रेम से सबको करो निहाल।।५।।

दिल में दया-उदारता मन में प्रेम अपार।
हृदय में धैर्य-वीरता सबको दो करतार।।६।।

हाथ जोड़ विनती करूँ सुनिये कृपानिधान।
साधु-संगत-सुख दीजिए, दया-नम्रता दान।।७।।

(३) कल्याण कामना

सब वेद पढ़ें, सुविचार बढ़ें, बल पाय चढ़ैं नित ऊपर को।
अविरुद्ध रहें, ऋजु पन्थ गहें परिवार कहें वसुधा भर को।।
ध्रुव धर्म धरें पर-दुःख हरें तन त्याग तरें भव-सागर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता हम आर्य करें वसुधा भर को।।

(४) राष्ट्र प्रार्थना

ओ३म आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम् आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम्। दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम् निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।। (यजु० २२/२२।।

ब्रह्मन् सुराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्म तेजधारी।

क्षत्री महारथी हो, अरिदल विनाशकारी।।

होवें दुधारु गौवें, पशु अश्व आशुवाही।

आधार राष्ट्र की हों नारी सुभग सदा ही।।
बलवान् सभ्य योद्धा, यजमान पुत्र होंवे।
इच्छानुसार वर्षें, पर्जन्य ताप धोवें।।
फल-फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी।
हो योग-क्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी।।

(५) यज्ञ महिमा

होता है सारे विश्व का कल्याण यज्ञ से।
जल्दी प्रसन्न होते हैं भगवान् यज्ञ से।।
ऋषियों ने ऊंचा माना है स्थान यज्ञ का।
करते हैं दुनियां वाले सब सम्मान यज्ञ का।।
दर्जा है तीन लोक में महान् यज्ञ का।
भगवान् का है यज्ञ और भगवान् यज्ञ का।।
जाता है देव लोक में इन्सान यज्ञ से।। होता है सारे विश्व.........
करना हो यज्ञ प्रकट हो जाते हैं अग्नि देव।
डालो विहित पदार्थ शुद्ध खाते हैं अग्नि देव।।
सबको प्रसाद यज्ञ का पहुंचाते हैं अग्नि देव।
बादल बना के भूमि पर, बरसातें है अग्नि देव।
बदले में अनेक, दे जाते हैं अग्नि देव।
पैदा अनाज करते हैं भगवान् यज्ञ से।
होता है सार्थक वेद का विकास यज्ञ से।। होता है सारे विश्व...........
शक्ति और तेज यश भरा इस यज्ञ नाम में।
साक्षी यही है विश्व के हर नेक काम में।।
पूजा है इसको श्रीकृष्ण-भगवान् राम ने।

होता है कन्या दान भी इसी के सामने।
मिलता है राज्य, कीर्ति, सन्तान यज्ञ से। होता है सारे विश्व.........
सुख शान्ति दायक मानते हैं दयानन्द इसे।
वशिष्ठ, विश्वामित्र और नारद मुनि इसे।।
इसका पुजारी कोई भी पराजित नहीं होता।
भय यज्ञकर्त्ता को भी किञ्चित् नहीं होता।
होती है सारी मुश्किलें आसान यज्ञ से।। होता है सारे विश्व.........
चाहे अमीर है कोई चाहे गरीब है।
जो नित्य यज्ञ करता है वह खुश-नसीब है।
हम सब में आये यज्ञ के अर्थों की भावना।
हम सबके सच्चे दिल से है यह श्रेष्ठ कामना।
होती हैं पूर्ण कामना-महान् यज्ञ से।। होता है सारे विश्व.........

(६) आज मिल सब गीत गाओ

आज सब मिल गीत गाओ उस प्रभु का धन्यवाद।
जिसका यश नित गाते हैं गन्धर्व मुनिजन धन्यवाद।।
मन्दिरों में कन्दरों में, पर्वतों के शिखर पर।
देते हैं लगातार सौ-सौ बार मुनिवर धन्यवाद।।
करते हैं जंगल में मंगल, पक्षीगण हर शाख पर।
पाते हैं आनन्द मिल गाते हैं स्वर करते हैं जल-चर धन्यवाद।।
कूप में, तालाब में, यज्ञ-उत्सव आदि में।
मीठे स्वर में चाहिए करें नारी-नर सब धन्यवाद।।
गान कर 'अमीचन्द', भजनानन्द ईश्वर की स्तुति।।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता, कान धर-धर धन्यवाद।।

(७) तू है सच्चा पिता

तू है सच्चा पिता, सारे संसार का **ओ३म्** प्यारा।
तू ही, तू ही है रक्षक हमारा।
चांद, सूरज सितारे बनाये, पृथ्वी आकाश, पर्वत सजाए।
अन्त आया नहीं, तेरा पाया नहीं, पार वारा।। तू ही तू ही है......
पक्षीगण राग सुन्दर हैं गाते, जीव-जन्तु भी सिर हैं झुकाते।
उसको ही सुख मिला, तेरी राह पर चला, जो प्यारा।। तू ही तू ही है......
पाप पाखंड हमसे छुड़ाओ, वेद मार्ग पे हमको चलाओ।
लगे भक्ति में मन, करे संध्या हवन, विश्व सारा। तू ही तू ही है......
अपनी भक्ति में मन को लगाओ, कष्ट सारे हमारे मिटाओ।
दुखिया कंगालों का और धन वालों का, तू सहारा। तू ही है......

(८) ओ३म् ध्वज गीत

जयति **ओ३म्**-ध्वज व्योम विहारी
विश्व प्रेम प्रतिमा अति प्यारी।
सत्य-सुधा बरसाने वाला,
स्नेह लता सरसाने वाला,
सौम्य-सुमन विकसाने वाला
विश्व विमोहक भव भय हारी। जयति **ओ३म्** ध्वज १.........
इसके नीचे बढ़े अभय मन,
सत्यपथ पर सब धर्म धुरी जन,
वैदिक रवि का हो शुभ उदयन,
आलौकित होवें दिशि सारी। जयति **ओ३म्** ध्वज २..............

इससे सारे क्लेश शमन हों
दुर्मति दानव द्वेष दमन हों,
अति उज्ज्वल अति पावन मन हों
प्रेम तरंग बहे सुखकारी। जयति **ओ३म्** ध्वज ३.................
इसी ध्वजा के नीचे आकर
ऊंच-नीच का भेद भुलाकर
मिले विश्व मुद मङ्गल गाकर
पन्थाई पाखण्ड विसारी। जयति **ओ३म्** ध्वज ४..............................
इसी ध्वजा को लेकर कर में
भर दे वेद ज्ञान घर घर में
सुभग शान्ति फैले जग में
मिटे अविद्या की अंधियारी। जयति **ओ३म्** ध्वज ५..............................
विश्व प्रेम का पाठ पढ़ावें
सत्य अहिंसा को अपनावें,
जग में जीवन-ज्योति जगावें
त्याग पूर्ण हो वृत्ति हमारी। जयति **ओ३म्** ध्वज ६.....................
आर्य जाति का सुयश अक्षय हो
आर्य ध्वजा की अविचल जय हो
आर्य जनों का ध्रुव निश्चय हो
आर्य बनावें वसुधा सारी। जयति **ओ३म्** ध्वज ७..............................

सङ्गठन सूक्त

(ऋ० १०-१९१-१-४)

संसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इडस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर ॥१॥

हे प्रभो! तुम शक्तिशाली हो बनाते सृष्टि को।
वेद सब गाते तुम्हें हैं कीजिए धन वृष्टि को ॥१॥

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानानां उपासते ॥२॥

प्रेम से मिलकर चलो बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भांति तुम कर्तव्य के मानी बनो ॥२॥

समानो मन्त्रः समितिः समानी, समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमंत्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥३॥

हों विचार समान सबके चित्त मन सब एक हों।
ज्ञान देता हूं बराबर भोग्य पा सब नेक हों ॥३॥

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुहासति ॥४॥

हों सभी के दिल तथा संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से जिससे बढ़े सुख सम्पदा। ॥४॥

प्रार्थना

हे परमपिता परमेश्वर! इस संसार सागर में चारों ओर काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि बुराइयां बड़े वेग से आक्रमण करते रहते हैं, हम बचने का प्रयत्न करके भी बुराइयों और व्यसनों में फंस जाते हैं। हे देव! हम पर कृपा करके हमें बल, शक्ति और सामर्थ्य प्रदान करो ताकि हम दुर्व्यसनों को अपने से दूर रखते हुए ठीक मार्ग पर चल सके। आप हमारे पिता हैं, माता भी आप ही हैं। जैसे माता अपने बच्चे को यत्न करता देख कर अंगुली पकड़कर उसे सहारा देती है और फिर अपनी छाती से लगा लेती है। आप हम बच्चों को भी उसी प्रकार सहारा देकर अपनी पवित्र गोद में बैठाकर अधिकारी बना दीजिए ताकि हमारा यह मानव-जन्म सफल हो सके। हम आपकी कृपा से हे नाथ! सब प्रकार के उत्तम पदार्थ, धन-धान्य, सुख ऐश्वर्य को प्राप्त करके सच्चे मार्ग पर चलते हुए आपको प्राप्त करें, मुक्ति को प्राप्त करें।

हे परम पावन प्रभो! हम में सात्विक प्रवृत्तियां जागरित हों। क्षमा, सरलता, स्थिरता, निर्भयता, अहङ्कारशून्यता इत्यादि शुभ भावनाएं हमारी सम्पत्ति हों। हमारा शरीर स्वस्थ तथा परिपुष्ट हो, मन सूक्ष्म तथा उन्नत हो, आत्मा पवित्र तथा सुन्दर हो, तुम्हारे संस्पर्श से हमारी सारी शक्तियां विकसित हों। हृदय दया तथा सहानुभूति से भरा हो। हमारी वाणी में मिठास हो तथा दृष्टि में प्यार हो। विद्या और ज्ञान से हम परिपूर्ण हों। हमारा व्यक्तित्व महान् तथा विशाल हो।

हे दयानिधे! आपकी अपार दया से हम अन्धकार से प्रकाश, तथा अज्ञान से ज्ञान कीओर बढ़ते हुए, सद्कर्म करते हुए, यज्ञमय जीवन बनाकर आपकी शरण में आपकी छत्र छाया में रहें। हम आपके सच्चे पुत्र बनकर आपके गुणों को धारण करते हुए हे देव अपना जीवन धन्य बनाकर आपका आशीर्वाद प्राप्त करें। ज्योतियों की ज्योति, हे देव! आपसे प्रकाश प्राप्त करे तथा अन्यों को सुपथ पर चलाते हुए कल्याण कर सकें। हे ज्ञान के भण्डार प्रभु! हम आपके वेद-ज्ञान को प्राप्त कर घर-घर में पवित्र वेद का प्रचार-प्रसार कर सकें, हमें ऐसी मेधावी बुद्धि एवं शक्ति प्रदान कीजिए। यह हमारी विनती एवं प्रार्थना स्वीकार करो, प्रभु! स्वीकार करो।